दूसरा विश्व युद्ध

सचित्र

दूसरा विश्व युद्ध

लेखक—

जितेन्द्र नाथ सान्याल

ओरियेण्टल पब्लिशिङ्ग हाउस

बनारस

मूल्य ।।।)

Printed & Published by H. N. Sen,
at the Anglo Oriental Press, Benares
for the Oriental Publishing House, Benares.

सूचि

द्वितीय विश्व-युद्ध

प्रस्तावना

द्वितीय विश्व-युद्ध सन् १९१४-१८ के प्रथम महायुद्ध का परिणाम है जैसा कि इस पुस्तक के नाम से स्पष्ट है। एक प्रकार से यह युद्ध उसी युद्ध का एक आगे बढ़ा हुआ स्वरूप है। मार्शल फोश कहा करते थे कि इस युद्ध का अन्त जिस रूप में हुआ है द्वितीय युद्ध का प्रारम्भ उसी रूप में होगा। सामरिक तथा राजनीतिक, दोनों ही क्षेत्रों में उपर्युक्त कथन की वास्तविकता प्रमाणित हो गयी। पिछले महायुद्ध में, 'युद्ध को सर्वदा के लिये समाप्त करने के निमित्त युद्ध' की आवाज बारबार ऊँची

की गयी थी। लेकिन वह केवल, 'गरजने वाले बादल बरसते नहीं' वाली कहावत चरितार्थ करके ही रह गयी। वस्तुतः इस विश्व-युद्ध का बीजारोपण उसी युद्ध में किया गया था। पिछला महायुद्ध इसकी प्रस्तावना मात्र सिद्ध हुआ।

संसार के ३३ राष्ट्रों के विरुद्ध, जिनमें बड़े से बड़े और बली से बली राष्ट्र भी सम्मिलित थे, साढ़े चार वर्ष तक जम कर गहरा युद्ध करने के बाद केन्द्रीय राष्ट्र जिनमें केवल चार ही शेष रह गये थे, ह्रास के निकट और पतनोन्मुख हो गये थे। एक जर्मन ही ऐसा था जिसने अपने हथियार तो डाल दिये थे लेकिन जो निःशस्त्र नहीं हो सका था। उसके शस्त्रास्त्र कुछ कुंठित अवश्य हो गये थे लेकिन टूट कर, खण्ड खण्ड होकर वस्तुतः बेकाम नहीं हो गये थे। उसने अपने शत्रु पर ऐसे गहरे और तेज वार किये थे जो शीघ्र भुलाये जाने वाले न थे और इसलिये मित्रराष्ट्र यह मानने को तैय्यार नहीं थे कि उनका शत्रु पंगु कर दिया गया है। एक मार्शल फोश का ही दृढ़ विश्वास था कि शत्रु निकम्मा कर दिया गया है, उसकी शक्ति कुचल दी गयी है। उनका यह निष्कर्ष भौतिक प्रमाणों पर नहीं बल्कि विजय करने की दृढ़ लालसा से उत्पन्न स्वनिर्मित आत्म विश्वास पर था।

जर्मनी विजित था; लेकिन विजेताओं की अवस्था उस विजित जर्मनी से अधिक अच्छी नहीं थी। सारे युद्धलिप्त

देशों की जनता भूख से अधमरी हो रही थी। मनुष्यों की संख्या बहुत ही कम हो गयी थी। अनुमानतः ब्रिटिश साम्राज्य में कुल १०,८९,९१९ आदमी मरे और २४,००,९८८ घायल हुए; फ्रान्स में मृत्यु संख्या १३,९३,३८८ तथा आहतों की संख्या १४,९०,००० थी; और जर्मनी में मृत्यु संख्या २०,५०,४६६ तथा ४२,०२,०३० घायल की संख्या थी। जन संख्या की इस क्षति के अतिरिक्त युद्ध का खर्च भी बहुत अधिक रहा। ग्रेट ब्रिटेन का दैनिक युद्ध व्यय ७० लाख पौण्ड था और जर्मनी का ५० लाख पौण्ड प्रतिदिन था। फ्रान्स का दैनिक युद्ध व्यय ४८ लाख पौण्ड था। कुल युद्ध व्यय ७५,०००,०००,००० पौण्ड था। अनुमान लगाया गया है कि इतने धन में संयुक्तराष्ट्र, कनाडा, ग्रेट-ब्रिटेन, फ्रान्स, जर्मनी, रूस और अस्ट्रेलिया में प्रत्येक परिवार के लिये ५ एकड़ जमीन, मकान, निःशुल्क शिक्षा तथा निशुल्क चिकित्सा की व्यवस्था बड़ी आसानी में हो सकती थी।

मार्च से लेकर जून सन् १९१८ तक मित्र शक्तियों पर जर्मनों ने तीन बड़े बड़े हमले किये। जर्मनी के सदर फौजी अधिकारियोंने इन हमलों में अपना सर्वस्व लगा दिया था। १२० मील विस्तृत मोरचे से ७ हजार जर्मन तोपें दिन रात गरजती रहती थीं; साढ़े बारह लाख जर्मन सैनिक आगे बढ़ते जा रहे थे। यद्यपि इन्हें विलक्षण सफलता मिली लेकिन विजय, अभी

बहुत दूर की बात थी।

मित्रराष्ट्र इञ्च पर इञ्च पीछे हटते जाते थे लेकिन अपना मोरचा उन्होंने कायम ही रक्खा; अपना उत्साह ढीला नहीं होने दिया। जर्मन सैनिक अधिकारियों को बड़ी निराशा हुई जब उन्होंने देखा कि शत्रु पहले ही की तरह डटा हुआ है और अपने साधन तथा शक्ति करीब करीब समाप्त है। अपने इस हतोत्साहित दुश्मन को मार्शल फोश ने गहरी शिकस्त देना शुरु कर दिया। जर्मन पीछे हटने लगे।

—अगस्तसे लेकर सितम्बर सन् १९१८ तक युद्ध जारी रहा। जर्मनों ने डटकर बड़े साहस के साथ सामना किया। लेकिन विजय की सारी आशा उनके मस्तिष्क से हवा हो गयी। इस हालत में नवम्बर महीने के प्रारम्भ में गृह मोरचे के टूटने के लक्षण से आशंकित, युद्ध से थका तथा करीब करीब भूख की महामारी से ग्रस्त जर्मनी में कहीं-कहीं क्रान्तिकारी आन्दोलन शुरू हो गये। जर्मनी के सामने सन्धि प्रस्ताव के सिवा और कोई मार्ग नहीं रह गया।

'सन्धि के समय के दृश्य को भी पाठकों के सामने उपस्थित करना रोचक होगा। उस समय यह कौन जानता था कि बीस वर्ष बाद इस घटना की पुनरावृति हो सकता है? यहाँ तक कि उस समय के कुछ विशिष्ट व्यक्ति भी आज मौजूद हैं।

प्रातःकाल, ७ नवम्बर सन् १९१८। मार्शल फोश को बेतार के तार पर एक समाचार मिला। जर्मनी ने मानवता के नाम पर दया की भिक्षा मांगी थी। उसने सन्धि की शर्तों पर विचार करने के लिये समय और स्थान निश्चित किये जाने की प्रार्थना की थी। मार्शल फोश ने प्रार्थना की अवहेलना की। लेकिन कम्पीन (Compiegne) के जंगल में ९ बजे सुबह उन्होंने मिलने का समय दिया। स्पेशल ट्रेन में पेतां और वेगां के साथ जर्मन दूत से मिलने के लिये मार्शल फोश ने उक्त स्थान के लिये प्रस्थान किया। जर्मन दूत के पहुँचने पर वेगां ने उनकी जाँच की। बाद में उन्होंने मार्शल फोश से परिचय कराया।

"आपके यहां आने का उद्देश्य क्या है? आप क्या चाहते हैं?"——मार्शल फोश ने सबसे पहले पूछा।

"सन्धि के लिये, मित्रराष्ट्रों से प्रस्ताव की अपेक्षा में हमलोग श्रीमान के पास आये हैं"– जवाब मिला।

"मुझे कोई प्रस्ताव नहीं करना है।"

प्रतिहत बुद्धि तथा रहस्यावृत जर्मन प्रतिनिधि चुपचाप बैठ गये। तब एक ने पूछा—'आपकी क्या इच्छा है? क्या आप चाहते हैं कि हम अपने को और अधिक व्यक्त करें? हमलोग यह कहने के लिये तैयार हैं कि हमलोग सन्धि की शर्तें चाहते हैं।'

'मुझे आपको कोई शर्त नहीं देनी है।'

रहस्यलोक में कुछ समय तक और भटकने के बाद जर्मनों ने समझा कि बात क्या है। उन्हें पता चला कि हमलोग सन्धि का प्रस्ताव पाने अथवा उस पर विचार करने के लिये नहीं बल्कि उसी जगह और उसी स्थान पर सन्धि पत्र पर या तो हस्ताक्षर करने या सीधे वापस जाने के लिये आये हैं चाहे शर्तें कुछ भी क्यों न हो। कुछ समय के बाद फोश ने जर्मन दूत को समय दिया। ११ नवम्बर सन् १९१८ को ११ बजे सुबह तक सन्धि पत्र पर या तो हस्ताक्षर करो या लौट जाओ। हस्ताक्षर अन्त में होगया।

उपरोक्त घटना को हुए अभी २२ ही वर्ष हुए। उसी रेलवे स्टेशन के उसी स्थान पर उसी रेल के उसी डब्बे में उस घटना के ठीक विपरीत बात हुई है। दोनों मार्शल पेताँ और जेनरल वेगाँ की आँखों के सामने ही यह घटना हुई।

जब मित्रराष्ट्रों ने देखा कि जर्मनी की शक्ति धूल में मिल गयी तब मारे खुशी के वे पागल हो उठे। इसी उन्मत्त प्रवृति के वशीभूत होकर उन्होंने जर्मनी के लिये सन्धि की शर्तें तय की। प्रेसिडेन्ट विल्सन के आदर्शों से भरे सैद्धान्तिक वक्तव्य से जर्मनी को सन्धि के लिये हाथ पसारने की प्रेरणा हुई थी। प्रेसिडेन्ट विल्सन की—'चौदह शर्तों' से जर्मन जनता के मन में

न्यायपूर्ण सन्धि की आशा का सञ्चार हुआ था। लेकिन समय आने पर यह मालूम होगया कि विल्सन के आदर्शों का व्यावहारिक राजनीति में कोई स्थान नहीं था। विल्सन महोदय ने युरोपियन प्रांगण मे अपनी ही महानता की भावना से अभिभूत होकर पैर रखा था। उनका विश्वास था कि हज़रत मूसा की तरह मैं भी संसार में नयी व्यवस्था और नये युग का अवतरण करने के लिये भेजा गया हूं। उनकी यह महान अज्ञानता थी। उन्हें यूरोप की भौगोलिक स्थिति का भी ज्ञान नहीं था; यहाँ तक कि एक जेक और एक स्लोवाक में क्या अन्तर है, वे नहीं बता सकते थे।

संयुक्त राष्ट्र की राजनीति सर्वदा अशान्ति पूर्ण रही। कोई यह नहीं जानता था कि किस क्षण वहाँ का राजनीतिक चक्र किस दिशा की ओर प्रवर्तित हो उठेगा। फिर भी विल्सन की प्रधानता इस बात में थी कि वे संयुक्तराष्ट्र अमेरिका के राष्ट्रपति थे। गृह राजनीति में इसलिये कोई भी हस्तक्षेप सम्भव नहीं था। भौतिकवादी यूरोप पर अपने आदर्शवादी आटोप के डालने का अवसर तथा सुविधा अमेरिकन गृहराजनीति ने विल्सन को नहीं दी। इसलिये युरोपियन राजनीतिज्ञों ने उन्हें शान्ति-संस्थापकों की मण्डली से वड़ी शीघ्रता से उपहास के साथ बाहर कर दिया।

मई के महीने में जब जर्मन प्रतिनिधि वर्साई बुलाये गये

तो उन्हें यह जरा भी ज्ञात नहीं था कि सन्धि की शर्तों का स्वरूप क्या होगा। नवीन प्रजातंत्रवादी जर्मनराष्ट्र के तत्कालीनी परराष्ट्र सचिव उच्च घराने के काउण्ट वर्कडर्फ—रंतजन थे जो प्रजातंत्रात्मक विचारों के पोषक तथा सुसंस्कृत होने के कारण उस पद पर नियुक्त किये गये थे। उन्होंने सोचा था कि सन्धि, प्रस्ताव के रूप में, सामने लायी जायगी जिस पर साधारण सभा में मध्ययूरोपीय राष्ट्र मित्रराष्ट्रों के साथ विचार करने के लिये आमंत्रित किये गये रहे होंगे। वस्तुतः इसी समझ से विशेषज्ञों ने सन्धि का मुसविदा बनाना प्रारम्भ किया था। उन्होंने सन्धि का प्रारम्भिक खाका तैयार किया था जिसमें अधिक से अधिक मांगें इस ख्याल से रखी गयी थीं कि जर्मनों को इस सम्बन्ध में कह सुनकर कुछ कम कराने का अवसर तो दिया ही जायेगा। वे समझबूझ लेंगे। लेकिन अन्तमें यह निश्चय हुआ कि जर्मनी के साथ कोई भी समझौता या बातचीत नहीं होगी। अन्तिम चेतावनी के रूपमें सन्धि उन पर लाद जाने के लिये बनायी गयी थी।

जर्मन प्रतिनिधियों ने इस बात को ७ मई को महसूस किया। अपने विजेताओं के सामने वे ट्रायनान महल में कैदी के रूपमें लाये गये। क्लीमैन्सौ ने एक छोटा किन्तु अति भयंकर भाषण किया जिसमें युद्धका सारा दोष जर्मनी पर लगाया। वर्कडार्फ रंतजान ने शान के साथ जवाब दिया—'११ नवम्बर

के बाद से, जब हमारे विरोधियों को विजय निश्चित होगयी थी, अवरोध लगाये जाने का उनका कठोर निश्चय ऐसे हजारों लाखों आदमियों की मृत्यु का कारण हुआ जो लड़ाई में लिप्त नहीं थे। जब आप दोष और दण्ड की बात उठाते हैं तो साथ ही इस बात पर भी गौर कीजिये"। उनका भाषण उदण्डता से पूर्ण बतलाया गया। सफेद जिल्द की एक किताब, जिसमें ४०० विचित्र शर्तें लिखी गयी थी उनको दी गयी और जर्मन उस सभागृह से बाहर निकल आये।

आखिर काल जर्मनों को सन्धि की शर्तों का पता चला। यह इतनी भयंकर थी कि जिसका अनुमान तक किसी को नहीं था। बी० रंतजान ने कहा—एक वाक्य में उसे हम कह सकते हैं कि 'जर्मनी अपने अस्तित्व का लोप करदे'। जर्मनी का आठवां हिस्सा तथा उसकी $\frac{१}{१०}$ प्रजा उससे छीन ली गयी। जर्मनी को, पूर्वी प्रूशिया तथा जर्मनी, दो भागों पोलिश मध्यभूमि द्वारा विभक्त कर दिया गया। जर्मनी का आर्थिक विनाश किया गया। जर्मनी औद्योगिक देश था। उसका जीवन, उसके खनिज पदार्थों के साधन तथा विदेशी और औपनिवेशिक व्यापार था। सन्धि की शर्तों द्वारा अलसास, लोरेन, सार और अपर साइलेसिया के छीन लिये जाने के कारण उसको कोयले और लोहे की कमी होगयी। सारे उपनिवेश तथा विदेशों की सुविधायें उसके हाथ से निकल

२

गयी। व्यापारी जहाज उस से छीन लिए गए। व्यापार के लिये अपनी नदियों का वह उपयोग नहीं कर सकता। ये नदियाँ अन्तर्राष्ट्रीय कमिशन के अधिकार में करदी गयीं। आत्मरक्षा का कोई भी साधन उसके पास नहीं रख छोड़ा गया। केवल एक लाख सैनिकों की एक पल्टन तथा १५००० टन वजन का समुद्री वेड़ा उसको दिया गया। बचे कुचे आर्थिक साधनों में से उसे मित्रराष्ट्रों को एक गहरी अनिश्चित रकम हर्जाने के रूप में देनी थी। अन्त में जर्मनी को सर्वदा के लिये युद्ध के दोष का भार भी वहन करना था।

सन्धि के समाचार से जर्मन स्तब्ध रह गये। सन्धि पत्र पर हस्ताक्षर करने या उसे अस्वीकार करने के अतिरिक्त उनके सामने अन्य कोई मार्ग नहीं रह गया। उनकी सारी प्रार्थनायें, उनके सारे अनुनय विनय तथा प्रस्ताव व्यर्थ सिद्ध हुए। केवल ब्रिटेन के तत्कालीन प्रधान मंत्रि लायड जार्ज के कहने सुनने पर थोड़ी बहुत रियायत की गयी।

जर्मन सरकार ने पहले इस आशा में देर करने वाली नीति का अनुसरण करने का विचार किया कि विजेता लूट के माल पर आपस में ही एक दूसरे से लड़ने लगेंगे। लेकिन मंत्रियों में से एक ने सन्धि पत्र पर हस्ताक्षर होने के पहले कम्पेन की उस गाड़ी में मार्शल फोश का भाव देखा था। फ्रेञ्च लोगों की कठोरता किस सीमा तक पहुँच सकती है, वह इसे भली भांति

जानता था। उसने सन्धि पत्र पर हस्ताक्षर करने के लिये अन्य-मंत्रियों को किसी तरह राजी किया। २८ जून सन् १९१८ में, जिस दिन उस सराजिवो हत्या-काण्ड की तिथी थी जिसने युद्ध का आग दुनियाँ भर में प्रज्वलित करदी थी वासाई के 'हाल आव मिरिस' में जहाँ सन् १८७१ को प्रिन्स ओटो फौन विस्मार्क ने जर्मन साम्राज्य की नीव डाली थी, सन्धि पत्र पर हस्ताक्षर हो गये।

२८ जून सन् १९१८ में युद्ध के भार अक्रान्त तथा पीड़ित यूरोप में शान्ति का फिर उद्भाव हुआ। किन्तु आह, यह शान्ति कैसी थी! इसके अन्तर में और भी भयानक तथा और भी बड़े युद्ध का बीज सन्निहित था।

———

पहला अध्याय

युद्ध-विनशित यूरोप,—१९१९-३४

यूरोप के सन् १९१९ से १९३४ के बीच के इतिहास को एक वाक्य में गत महायुद्ध में हुई भारी क्षति की पूर्ति का प्रयत्न कह सकते हैं। साढ़े चार वर्ष तक उस युद्ध में संसार के प्रमुख-राष्ट्र जीवन के बहुमूल्य पदार्थों को विनष्ट करने में तल्लीन थे। विश्व के सर्वश्रेष्ठ मस्तिष्क वाले विद्वानों ने, मानव, रुपया, सामग्री, मनुष्य जाति के सब साधनों को उपयोग, अमानुसिक सर्वनाश के कार्य में किया। और जब वह युद्ध का पागलपन लोगों के दिमाग से उतर गया और उन्होंने पुनः पहले की स्थिति प्राप्त करने की कोशिश की तो उन्हें मालूम हुआ कि सर्वनाश करने का काम जितना आसान है, निमार्ण का काम उससे कई गुना मुश्किल है। पूर्व स्थिति को प्राप्त करने की कोशिश ज्यों ज्यों बढ़ती जाती थी, त्यों त्यों वह स्थिति मृग-मरीचिका की भांति और दूर दूर तर होती जाती थी। विजेता राष्ट्रों का अनुमान था कि मध्य यूरोपीय राष्ट्रों को स्वर्ग की काम-धेनु की तरह अपनी क्षति-पूर्ति के लिये जब तक चाहें चूसते रहेंगे। किन्तु अर्थ शास्त्र के नियम विज़ेता और विजित में



श्री चेम्बरलेन

ब्रिटेन के भूतपूर्व प्रधान मन्त्री

कोई भेद नहीं समझते। परिस्थिति बिगड़ती गई, राजनीतिक उथल-पुथल दुनियाँ की शान्ति भंग करते ही रहे। यद्यपि २८ जून सन् १९१९ में ही जर्मनी और मित्रराष्ट्रों ने शान्ति के सन्धि पत्र पर हस्ताक्षर कर दिये थे, और अगले एक या दो वर्षों में अन्य देशों से शान्ति के लिये सन्धि हो गई, किन्तु शान्ति की प्रगति अत्यन्त धीमी आशंका से पूर्ण रही। प्रत्येक विजित देश में युद्ध के चार वर्षों के बाद अगले चार वर्षों में क्रान्ति और गृह-विद्रोह का सामना करना पड़ा। सर्व प्रथम रूसी साम्राज्य का विध्वंस हुआ, मजदूरों की क्रान्ति सफल हुई और सन् १९१७ में समूहवादी (कम्युनिस्ट) दल ने जोर से शासन सूत्र अपने हाथ में छीन लिया। इसके बाद सन् १९१८-२० तक नवीन रूसी समाज को गृह-युद्ध के कारण बहुत आघात पहुंचा। उधर आटोमन साम्राज्य का पतन हो गया और तुर्की के क्रान्तिकारियों को मित्रराष्ट्रों के हमलों का सामना करना पड़ा था। सन् १९२३ में जाकर मित्रराष्ट्रों ने तुर्की के राष्ट्रीय प्रजातंत्रवादी सरकार से सन्धि की। जर्मन और आस्ट्रो-हंगेरियन साम्राज्यों का पतन विराम-सन्धि होने के कुछ हफ़्ते पहले ही हो गया। कुछ समय तक तो ऐसा प्रतीत हुआ कि बर्लिन, वियना और बुडापैस्ट में मजदूर क्रान्ति द्वारा समूहवादी अथवा कम से कम समाजवादी शासन कायम कर दिया जायगा। किन्तु उन शहरों में मित्र राष्ट्रों का दबाव इतना

अधिक था कि मित्रराष्ट्रों द्वारा अनुमोदित शासन ही वहाँ टिक सकता था। अब यह देखना था कि मित्रराष्ट्रों की सहायता से निर्मित नवीन हँगरी, नवीन आस्ट्रिया, और नवीन जर्मनी द्वारा यूरोप में शान्ति और उन्नति की नींव पड़ती है या नहीं।

यूरोप का सन् १९१९ से १९३४ के बीच का इतिहास दो मुख्य कालों में विभाजित किया जा सकता है; सन् १९१९ से १९२३ तक का काल विजित देशों से बदला लेने के लिये विजेताराष्ट्रों के महा-प्रतिगामी भावना का समय था। एक ओर तो कई विजित देशों में महामारी और अकाल जोरों से फैले थे, दूसरी ओर मित्रराष्ट्र उनसे अधिक से अधिक दण्डकर वसूल करना चाहते थे। हर्जाना के रूप में जर्मनी से ६ अरब ६० करोड़ पौण्ड माँगा गया था। जर्मनी के लिये यह परिमाण असम्भव था। पहले तो जर्मनी ने इन्कार करना चाहा किन्तु अपनी अस्वीकृति के भयानक परिणाम का ख्याल कर जर्मनी ने उसे स्वीकार कर लिया और अपनी शक्ति के अनुसार ईमानदारी से उसे देने का प्रयत्न करने लगा। जर्मनी ऐसा प्रयत्न कर के, जो देवताओं से ही सम्भव हो सकता है, मानव से नहीं, ३१ अगस्त सन् १९२१ में हर्जाने की पहली किश्त दे दी। किन्तु जर्मनी के महान आर्थिक संकट की भय उपस्थित हो गया। अगले वर्ष दी जाने वाली दूसरी किश्त देना जर्मनी

की शक्ति के बाहर की बात थी। अतः फ्रान्स का प्रतिगामी प्रधान मंत्री प्वायंकर ने ब्रिटिश प्रधान मंत्री की राय के विरुद्ध जर्मनी के एक औद्योगिक केन्द्र रूर पर हमला कर उस पर कब्जा कर लिया। वस्तुतः फ्राँन्स ने वार्सेई की सन्धि के अनुसार ही यह कार्य किया था। रूर के हाथ से निकल जाना था कि जर्मनी का सर्वनाश काल उपस्थित हो गया। इसके बाद अल्प काल में ही बहुत बड़ी संख्या में जनता का सत्यानाश हो गया।

अब इसका प्रभाव धीरे धीरे प्रकट होने लगा। उधर फ्राँन्स की वह नीति जो सोने के अंडे देने वाली मुर्गी को मार कर सब अण्डे एक साथ निकाल लेने की थी उसकी जगह ब्रिटेन ने बुद्धिमानी से काम लिया और उसने मुर्गी को जिन्दा रख कर उससे सदैव सोने के अण्डे लेने का उपाय किया। लार्ड कर्जन ने फ्रेंचसरकार के पास उसे स्वार्थ पूर्ण कार्य के लिए एक कड़ी चेतावनी भेजी। सन् १९२४ से १९२९ तक मध्य यूरोप के पुननिर्माण का काल था और उस पुननिर्माण के कार्य में जर्मनी के सहयोग की अवहेलना न की गई। धीरे धीरे जब मित्रराष्ट्र सन्धि द्वारा प्राप्त देशों अथवा रियायतों को संगठित करने लगे त्यों-त्यों युद्ध काल का बदला लेने और दण्ड देने की भावना की जगह उनमें बुद्धिमत्ता पूर्ण भावना आने लगी। ऐसा प्रतीत हुआ कि यूरोप अब पुननिर्माण के मार्ग पर बढ़

चुका है। किन्तु ज्ञात हुआ कि उस पुनर्निर्माण की इमारत गलत आर्थिक नीव पर बनाई जा रही थो। ज्यों-ज्यों इस पुनर्निर्माण का कार्य आगे बढ़ता गया त्यों त्यों सर्वनाश भी निकट पहुंच रहा था।

सन् १९२९ के प्रारम्भ में सर्वत्र आशावादी प्रवृत्ति का फैलना एक महान आश्चर्य की घटना है। ऊपर से तो मालूम हुआ कि इतिहास के सब से बड़े युद्ध की क्षति पूर्ति का कार्य सफल हो गया। जर्मनी झुक ही गया था, नव-निर्मित राष्ट्रों ने अपने को संघटित कर लिया था; करीब सब राष्ट्रों ने अपनी प्रचलित मुद्रा प्रणाली को संतुलित कर लिया था। मशीनों के कारण कम आदमियों की सहायता से पहले से अधिक चीजे बनने लगी थीं। सोवियत रूस ने एक पंचवर्षीय योजना के अनुसार अपनी १६ करोड़ जनता को मध्यकालीन सतह से ऊँचे उठाने का निश्चय कर लिया था। संयुक्त राष्ट्र के राष्ट्रपति यह आशा दिला रहे थे कि तत्काल दरिद्रता मिटा दी जायगी। सर आर्थर साल्टर ने लिखा था, शन् १९१९ में कुछ देशों की स्थिति तो पहले से नीचे अवश्य गिर गई है, परन्तु समष्टि रूप में संसार की स्थिति इतनी ऊँचो हो गई है जितनी पहले कभी नहीं थी और संसार उन्नति के माग पर ऐसी तीव्र गति से बढ़ने लगा, जैसा पहले कभी न हुआ था, और न कभी सोचा गया था।

इससे वड़ा भ्रम इससे पहले कभी नहीं उत्पन्न हुआ था। दो वर्ष के अल्प काल में ही जर्मनी क्रान्ति के सिंहद्वार पर पहुंच गया। नये राष्ट्रों ने लोकतंत्र का परित्याग करके अधिनायक तंत्र ग्रहण कर लिया। करीव करीव प्रत्येक देश में प्रचलित मूद्रा का दर अनिश्चित हो गया था। कारखानों में काम बन्द हो गया और गोदाम सामग्री से भर उठे, उसे खरीदने वाला कोई नही था। सोवियट रूस कठिनाई में पड़ गया, संयुक्त राष्ट्र अमेरिका की आर्थिक भीत्ति ढह गयी, दक्षिणी अमेरिका के ५ देशों मे क्रान्ति हो गई। सुदूरपूर्व में एक युद्ध हो ही रहा था। उधर कनाडा के खेतों में गेहूं के फसले जला दी गईं। ब्राजील में काफी की खेती जलाई जाने लगी। संसार का आधा व्यापार कम हो गया।

वात क्या थी ? इस का उत्तर देना वहुत ही कठिन है। इस युद्ध के पहले पूजींवाद प्रथा उत्थान-पतन की परिवर्त्तनशील चक्र में होकर चल रही थी। पहिले उन्नति इतनी अधिक हुई कि व्यापार में उत्तेजना जनक बातें होने लगी, फिर मन्दी पड़ जाती और फिर धीरे धीरे व्यापार अपनी पूर्व स्थिति पर पहुँचता। सन् १९२९ की मन्दी भी उसी ढंग की एक व्यापारिक उथल-पुथल थी जो व्यापार की उन्नति और अवनति के चक्र का एक अंग था। किन्तु साथ ही वह एक इससे भी वड़ी चीज़ थी। गत महायुद्ध के वाद काफी आर्थिक उथल-पुथल

हुई। प्रथमतः कच्चे माल विशेषत रबड़ और टिन के पैदावार में आवश्यकता से अधिक धन लगाया गया। जब वे तैयार हुये और बाजार में बिकने के लिये भेजे गये तो उनका अधिक होने के कारण स्वभावतः अत्यन्त भाव गिर गया और मन्दी आ गयी। दूसरी बात यह हुई कि रोजगार में होड़ होने के कारण उद्योग धन्धों का संगठन वैज्ञानिक ढंग पर हुआ जिस से लागत में कमी की गई और इसके फल स्वरूप बहुत कम मजदूरों को काम मिला। मजदूरों के रुपये कम हो गये अतः नये मालों की बिक्री नहीं हो सकी। इस कारण भी बाजार में भाव गिर गया। तीसरी बात यह हुई कि गत महायुद्ध ने संसार के आर्थिक संतुलन को उलट-पलट दिया था, युद्ध के कर्ज और मुआवजों के कारण अमेरिका और फ्रान्स संसार के बड़े महाजन हो गये थे। संसार का सोने ६० प्रतिशत भाग पेरिस और न्यूयार्क के खजानों में जमा होने लगा। संक्षेपतः दुनियाँ के बाजार में बहुत अधिक माल इकठ्ठा हो गया और जरूरतवालों के पास इतना पैसा नहीं था कि वे उन्हें खरीदते। वह मन्दी और कठिनाई जो उपर्युक्त कारणों से उत्पन्न हुई किसी एक ही देश या महाद्वीप में सीमित नहीं था। यह एक विश्वव्यापी आर्थिक सर्वनाश का समय था। धीरे धीरे लोगों का विश्वास हट गया, उनका भय पागलपन का रूप धारण करने लगा।

जहाँ तक यूरोप का सम्बन्ध था, युद्ध के पूर्व के दशक में जिस उन्नति पर लोगों को बहुत घमंड था, उसमें दो बातों की कमी थी। पहली बात तो यह थी कि अब मशीनों द्वारा उत्पादन पर केवल यूरोप का एकाधिपत्य न रह गया। जापान, भारत, चीन प्रभृत देशों ने भी युद्ध-काल में ब्रिटेन, जर्मनी और फ्रान्स के माल का भरोसा न करके स्वयं माल तैयार करना शुरू कर दिया था। दूसरी बात यह थी कि यूरोप कर्ज के धन पर अपना जीवन-निर्वाह कर रहा था। सन् १९२४ और १९२८ के बीच अकेले जर्मनी नें विदेशों से ७५ करोड पौंण्ड कज लिया था। एक मात्र कर्ज ही उसका जीवनाधार था, उसके बिना अपने उद्योग धन्धे नहीं चला सकता था जिसके लाभ से वह युद्ध के हर्जाने की किश्ते अदा करता था। गणना करने पर ज्ञात हुआ कि उसे प्रति सेकण्ड ८० मार्क और प्रति घंटे १३ लाख ८८ हजार मार्क युद्ध का हर्जाना अनिश्चित काल तक देना पड़ेगा। सन् १९२९ में एक अमेरिकन बैंकर यंग के सभापतित्व में एक समिति ने युद्ध का हर्जाना वसूल करने के लिए एक नई योजना बनाई। इस योजना से पहले की स्थिति में कुछ सुधार हुआ। किन्तु विश्व-संकट के काले बादलों ने इस योजना की अच्छी और बुरी सब बातों को समान रूप से ढक लिया। जर्मनी इस योजना को कार्यान्वित कर सकता था, किन्तु कर्ज लेकर

अपने उद्योग-धन्धों द्वारा ही यह ऐसा कर सकता था। किन्तु संयुक्त राष्ट्र अमेरिका उसे अब अधिक कर्ज देने में असमर्थ हो गया। अकस्मात महा संकट का सूत्रपात हुआ। अक्तूबर सन् १९२९ में न्यूयार्क के स्टाक-इक्सचेंज में एकाएक भारी मन्दी फैल गयी और पूंजीवालों को अपना अधिकांश धन गँवा देना पड़ा। इस मन्दी ने संसार के दो कमजोर स्थलों पर वज्रपात किया। प्रथमतः कर्जदारों पर वज्रपात हुआ क्योंकि अमेरिका अब कर्ज नहीं दे सकता था। उसने जर्मनी में सन् १९२८ में तो दस अरब पौण्ड धन लगाया था किन्तु सन् १९२९ में यह धन घट कर केवल ५ अरब ५० करोड पौण्ड रह गया। सन् १९२९ के अन्तिम महीनों में जर्मनी से अमेरिका ने अपने कम अवधिवाले कर्ज को वापस माँगना शुरु कर दिया। वस्तुओं के मूल्य पर भी उस मन्दी का असर पड़ा क्योंकि संसार का सब से धनी देश अमेरिका भी अब पुराने भाव पर माल खरीदने में असमर्थ था। सन् १९३० में अमेरिका ने विदेशी आयात पर इतनी अधिक चुंगी लगा दी जितनी इसके पहले वहाँ कभी नहीं लगी थी। विश्व भर में भाव गिरता गिरता सन् १९२८ में आधे भाव तक पहुंच गया। इससे कर्जदार देशों के सामने संकट काल उपस्थित हो गया, और जर्मनी के लिये तो जो संसार का सबसे बड़ा कर्जदार मुल्क था, इसका अर्थ सर्वनाश ही था। हाँ, यदि वह अपने कर्ज देने वालों को

तुरन्त कुछ भार हलका करने के लिये राजी कर लेता तो उसकी रक्षा हो जाती।

सन् १९३० का प्रारम्भ जर्मनी के लिए अत्यन्त अवसाद पूर्ण था। प्रति सप्ताह प्रजातंत्र विरोधी दल, जैसे वर्गवादी दल (कम्युनिस्ट), राष्ट्रीय समाज वादी दल आदि मजबूत होते जा रहे थे। मध्य-मार्गी "कैथलिक सेन्टर पार्टी" के नेता चान्सलर ब्रूनिंग ने जून में राष्ट्रपति हिण्डेनवर्ग को सलाह दिया कि वे राइसस्टाग को वर्खास्त कर के शासन-सूत्र अपने हाथ में लेलें, क्योंकि संकट काल में ऐसा करना वैधानिक ही है। ब्रूनिंग ने सोचा था कि ऐसा करने से जर्मनी क्रान्ति से बचा रह सकेगा। उनके मत में सब संकट का कारण युद्ध का हर्जाना ही था, और यदि हर्जाना लेने वाले देश अपना दावा छोड़ दें तो जर्मनी दिवालिया भी न हो सकेगा और प्रजातंत्र की रक्षा भी हो सकेगी।

फ्रान्स का यह पक्का विश्वास था कि जर्मनी अपनी कठि-नाइयों को बहुत वढ़ा चढ़ा कर कह रहा था। जब ब्रूनिंग ने व्यापार की रक्षा के लिये आष्ट्रिया के साथ मिल कर एक चुंगी-समिति (customs union) बनाने का प्रस्ताव किया तो फ्रान्स उसे तुरन्त अस्वीकार कर दिया। चुंगी-समिति न बनाने के कारण व्यापक आर्थिक संकट उत्पन्न हो गया। मई सन् १९३१ में वियना का सब से बड़ा बैंक 'क्रेडिट-

ऐन्स्टाल्ट' अपने ऊधार चूकाये (liabilities) देने में असमर्थ हो गया। इस बैंक के अधीन आस्ट्रिया के ८० प्रतिशत उपयोग धन्धों के कारखाने थे। इसके दिवालिया हो जाने का असर जर्मनी पर तुरन्त पड़ा। जर्मनी की जनता जर्मनी के बैंको की ओर टूट पड़ी और राइसबैंक से केवल एक हफ्ते में दो करोड़ साठ लाख पौण्ड निकाले गये।

अब दिवालिया बनने की जर्मनी की बारी थी। संयुक्त राष्ट्र अमेरिका के राष्ट्रपति ने प्रस्ताव किया कि एक वर्ष तक युद्ध के हर्जाना की किश्ते जर्मनी से न ली जायँ। फ्रान्स ने जून तक मेरिटोरियम पर अपनी स्वीकृति नहीं दी और जब उसने स्वीकृति दी तो सब बातें बिगड़ चुकी थीं। १३ जुलाई को 'ड्राम्सर बैंक' ने दिवाला बोल दिया और दो दिन तक जर्मनी के सब बैंक बन्द कर दिये गये। देश की आर्थिक स्थिति बिलकुल उलट-पलट गई।

दूसरा अध्याय

—नाज़ी जर्मनी का प्रारम्भ—

महायुद्ध के बाद जर्मनी ने अत्यन्त एकाग्रता के साथ पुन-निर्माण का कार्य प्रारम्भ किया। कैसर तथा अन्य सैनिक अधिकारी अपमानित हो चुके थे और वीमर में एक नवीन 'उदार प्रजातंत्रवादी-शासन विधान' स्वीकृत किया गया। विजेता देशों द्वारा मागें गये युद्ध-व्यय को देने का इमानदारी के साथ यथा सम्भव प्रयत्न किया गया। किन्तु मित्रराष्ट्रों की लालच और अदूर दर्शिता विशेषतः फ्रान्स की बदला लेने की भावना ने उदार-प्रजातंत्रवादी जर्मन सरकार की मध्य-मार्ग वाली नीति को आगे नहीं बढ़ने दिया। परिणाम यह हुआ कि जर्मनी तेजी के साथ दो आत्यन्तिक बातों की ओर बढ़ने लगा, एक ओर तो वर्ग वादियों (communist) का जोर बढ़ने लगा और दूसरी ओर जमीदार, तालुकेदार, भूतपूर्व सैनिक अफसरों आदि प्रतिक्रियावादि जोर पड़ने लगे। इन दो छोरों के बीच धक्का खाते हुए जर्मनी की दशा प्रति-दिन बिगड़ने लगी।

सहन शीलता की भी एक सीमा होती है। सन् १९३२ के अन्त तक जर्मनी इस अन्तिम सीमा पर पहुंच गया। चार

साल तक अत्यन्त कष्ट उठा कर घोर युद्ध करने के बाद उनकी हार हो गई थी, उसके बाद क्रान्ति, सिक्कों की समस्या आदि विपत्तियाँ वारी वारी आईं। फिर देश में सम्पत्ति की असाधारण वृद्धि हुई जिसका मूल विदेशों के कर्जों में निहिति था और उद्योग-धन्धों के पुनःसंघटन में २० लाख व्यक्ति वेकार हो गये और जो उनसे लाभ हुआ वह विदेशियों के हाथ लगा। अन्त में जर्मनी को दिवालिया भी बनना पड़ा जिसके कारण १६ से ३२ वर्ष की उम्र वाले आधे जर्मन युवक बेकार हो गये जिनका भविष्य अन्धकारमय था। अतः यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है यदि जर्मन जनता उन मुख्य राष्ट्र शक्तियों के विरुद्ध बगावत करने को तैयार हो गई जिन्होंने वार्सेई में उन पर विपत्ति, अपमान तथा कर्जों के बोझ लाद दिये थे, जिन्होंने शान्ति की शर्तें तैयार की थीं। और वह वीमर प्रजातंत्र वादी उन शासकों के विरुद्ध भी बगावत करने को तैयार हो गई जिन्होंने स्वतंत्रता तो उसे दिया पर नेतृत्व न दिया। देव तुल्य नेता की जगह उन्हें लाभ उठाने वाले बनिये-नेता दिये और जिनके कारण शान्ति की जगह अराजकता फैल गई थी। केवल एक ही प्रश्न जर्मन जनता के सामने था कौन दल प्रजातंत्रवादी शासन को उलट देने तथा वार्सेई सन्धि को सुधारने के लिये शक्ति सम्पन्न है? वर्गवादियों (कम्युनिस्ट) को मज्दूर श्रेणी का समर्थन अवश्य प्राप्त था किन्तु वे

सम्पूर्ण जर्मन जाति का नहीं बल्कि केवल एक श्रेणी का भला चाहते थे और उनकी सहानुभूति अन्य देशों के लिये भी थी, जहाँ जर्मन जनता स्वभावतः अन्य राष्ट्रों को घृणा करने वाली होती है। राष्ट्रवादियों को भी काफी समर्थन प्राप्त था किन्तु वे भी एक श्रेणी पूर्वीय जमींदारों और पश्चिमी पूँजीवादियों के लिये ही लड़ रहे थे। समूचे जर्मनी का भी हित चाहने वाला केवल 'राष्ट्रीय समाजवादी-दल' ही बच रहा था।

इस राष्ट्रीय समाजवादी दल का इतिहास केवल एक आदमी का इतिहास है। एडोल्फ हिटलर आस्ट्रिया के ब्राउनान नामक गाँव में एक चुँगी अफसर के घर सन् १८८९ में पैदा हुआ था। १२ वर्ष की उम्र में ही वह अनाथ हो गया और आर्टस स्कूल में कोई वजीफा पाने की आशा में वह वियना चला गया। पर उसकी आशा पर पानी फिर गया और निराश हो कर उसे कई तरह के काम जैसे राजगीरों को मदद देना, मकानों में रँगाई का काम करना आदि करने पड़े। मजदूर उसे घृणा करते थे अतः वह वियना से म्यूनिख चला आया। संयोगवश उसी समय युद्ध छिड़ गया और वह जर्मन सेना में भरती हो गया। वहाँ उसने अत्यन्त वीरता से युद्ध किया और कारपोरल बना दिया गया। वह युद्ध में घायल भी हुआ था और उसे बहुत इज्जत मिली। किन्तु लड़ाई के समाप्त होते ही वह पूर्ववत बेकार होकर म्यूनिख पहुंचा। कोई उसे पूछने वाला

न था। सन् १९२० में उसे ६ व्यक्ति उसके विचार के मिल गये जिनके साथ मिलकर उसने अपना २५ माँगों वाला कार्य-क्रम बनाया जिनमें यहूदियों, लाभ उठाने वालों, विदेशियों, वीमर विधान के नेताओं, वार्सेई की सन्धि आदि के विरुद्ध माँगे भी थीं। यही माँगें आज नाजी जर्मनी के आप्तवाक्य (gospel) हैं।

उस दल की उन्नति होने लगी। दूकानदारों और निम्न मध्य श्रेणी के नवजवानों को जिन्हें "पूर्व देशीय" समाजवाद ने छोड़ दिया था इस दल की बातें अच्छी लगीं, पश्चिमीय क्षेत्र के उद्योग-धन्धों के मालिकों ने जिन्हें रूर में पनपने वाला समाज-वाद खटकता था, कुछ रुपया इकट्ठा किया, कुछ विचार-बुद्धिवाले शिक्षित व्यक्ति भी इस दल में सम्मिलित हो गये जिनमें हिडेलबर्ग का दर्शनाचार्य डा० गोबेल्स नाम का युवक भी था। हिटलर का भाग्योदय हुआ। उसे भूतपूर्व मार्शल ल्यूडेनडार्फ का सहयोग प्राप्त हो गया। जिस तरह मुसोलिनी ने रोम पर धावा किया था, उस तरह बर्लिन पर भी धावा करने का विचार किया गया और उक्त मार्शल ने सेना नायकत्व का भार स्वीकार कर लिया। सन् १९२३ का यह वही काल था जब कि रूर पर फ्रान्स ने कब्जा कर लिया था और प्रजातंत्र वादियों का पतन होता सा दृष्टि गोचर हो रहा था। किन्तु नाजी सैनिक म्यूनिख से कुछ मील ही आगे बढ़ पाये थे कि सरकारी सेना

द्वारा वे रोक दिये गये। कई नेता बाल बाल बचे, जिनमें एक गोयरिंग भी था जो बुरी तरह घायल हुआ और स्ट्रेचर पर उठा कर पहाड़ों में होते हुए उसे इटली में पहुंचाया गया। किन्तु हिटलर पकड़ लिया गया और उसे पाँच वर्ष कैद की सजा दी गई, पर वह कुछ महीने ही जेल में रह सका।

सन् १६२४ के चुनाव में नाजी-दल को १९ लाख मत (वोट) मिले और राइखस्टाग (जर्मन पार्लामेन्ट) में उसे ३२ जगहें प्राप्त हुईं। दिसम्बर के चुनाव में उसे केवल ६ लाख वोट और १४ जगहें ही मिली थीं।

दल की शक्ति यहीं आकर रुक गई और उस मन्दी के काल तक वैसी ही बन रही जब तक कि प्रजातंत्र वादियों के शत्रुओं की संख्या काफी न बढ़ गई। सितम्बर सन् १६३० के चुनाव में करीब ६५ लाख जर्मनों ने नाजी-उम्मेदवारों को वोट दिये। इसके बाद हिटलर सदैव आगे ही बढ़ता गया। राइखस्टाग में उसके दलके १२७ सदस्य थे। यह एक महान संगठित दल बन गया जिसका प्रधान दफ्तर ब्राउन हाउस, म्यूनिख में था। दल के पास बेकार नवजवानों और बेकार सैनिकों की भारी सेना तैयार हो गई और उसके अनुयायियों की संख्या सारे देश में काफी बढ़ गई।

इस समय हिटलर जो कुछ वादा कर रहा था या मागें उपस्थित कर रहा था, उनका विरोध यदि कोई जर्मन करता

तो आश्चर्य की ही बात थी। किसी भी अपमानित और भूखे देश के लिये राष्ट्रीयता और समाजवाद के समन्वित सिद्धान्त से बढ़ कर और क्या हो सकता है? वार्सेई के अपमान तथा युद्ध में पराजय के कलंक की जगह हिटलर यह कहता था कि जर्मन आर्य-संतान हैं, गोरी जातियों में सर्व श्रेष्ठ हैं और जिसकी सभ्यता सारे संसार ने ग्रहण की है। प्रजातंत्रवादी शासन में सुधार करने की जगह वह वादा कर रहा था कि हर श्रेणी के लोगों को काम दिया जायगा और तृतीय जर्मन साम्राज्य का निर्माण किया जायगा, जो पवित्र रोमन-साम्राज्य से भी अधिक देदीप्यमान और विस्मार्क-कैसर के द्वितीय जर्मन साम्राज्य से भी अधिक महान होगा।

इसी बीच जर्मन चान्सलर हेनरिक ब्रूनिंग युद्धके हर्जाना की मांगों को पूरी करने के प्रयत्न में बहुत से कर लगा कर जनता का सब विश्वास और समर्थन खो बैठे। राष्ट्रपति हिण्डेन वर्ग किसी दूसरे को उसकी जगह चान्सलर बनाना चाहते थे। उन्होंने इसके लिये वान पेपन को जो कुलीन वर्ग के भारी प्रतिगामी जमीदार थे चुना, जिन्होंने जमीदारों का मंत्रिमण्डल बनाया। वान पेपन ने सोशल डेमोक्रेटिक दल को जो वीमर-विधान तथा प्रजातंत्रवादी समाजवाद का एक मात्र कट्टर समर्थक दल था, मटियामेट कर दिया। इससे हिटलर का रास्ता और साफ़ हो गया। इसे दुर्भाग्य ही कहना चाहिये कि

मित्रराष्ट्रों ने यूरोप में शान्ति चाहने वाले एकमात्र सोशल डिमोक्रेटिक दल को तो कमजोर बना दिया और प्रतिक्रियावादी जमींदार-मंत्रिमण्डल को युद्ध-हर्जाना के सम्बन्ध में रियायते देकर उन्होंने उसे सम्मानप्रदान किया।

किन्तु जमींदारों को अभी नाजियों का सामना करना बाकी था। जुलाई के चुनाव में हिटलर के दल को १ करोड़ ३७ लाख ३३ हजार वोट मिले और राइखस्टाग में २३० जगहें प्राप्त हुईं। अतः अब हिटलर को कुछ सुविधायें देना जरूरी हो गया, प्रेसिडेण्ट ने हिटलर को मंत्रिमण्डल में सम्मिलित होने के लिये बुलाया किन्तु उसने अस्वीकार कर दिया। वह या तो पूरा अधिकार चाहता था या कुछ नहीं चाहता था। अब वान पेपन नाजियों से मोर्चा लेने की तैयारी करने लगे। जिस दिन राइखस्टाग की बैठक हुई उसी दिन उन्होंने राष्ट्रपति की स्वीकृति से राइखस्टाग को बर्खास्त कर दिया और हिटलर की शक्ति को दबाने के लिये राष्ट्रीय अधिनायकतंत्र कायम करने का विचार करने लगे। समाचारों पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया, रेडियो पर सरकार का कब्जा हो गया। प्रशा का शासन केन्द्रीय सरकार ने अपने हाथ में ले लिया, वर्गवादी जेलों में ठूँस दिये गये और यहूदी सार्वजनिक जगहों से हटा दिये गये। हिटलर द्वारा किये गये वादा को स्वयं पूरा करके वान पेपन ने जनता का समर्थन प्राप्त करने की

कोशिश की। फलतः नवम्बर के चुनाव में नाजियों को केवल २० ही लाख वोट मिले।

नाजियों ने अब शासन सूत्र को अपने हाथ में लेने के लिये सामरिक कार्रवाई करने की तैयारी प्रारम्भ की। अन्त में प्रेसिडेण्ट ने वान पेपन के स्थान पर जेनरल वान श्लीचर को जिनका जर्मन सेना पर अधिकार था और मजदूर संघ पर भी कुछ प्रभाव था, नियुक्त किया। लेकिन इससे कुछ लाभ नहीं हुआ। ३० जनवरी सन् १९३३ को प्रेसिडेण्ट को हिटलर के लिये चान्सलर की जगह खाली करनी पड़ी।

तृतीय अध्याय

—शासन सूत्र हिटलर के हाथ में—

हिटलर के अधिकार प्राप्त करने के बाद, यूरोप का इतिहास केवल एक व्यक्ति की क्रियाओं तथा उनकी प्रति क्रियाओं की इतिहास है; और वह व्यक्ति है, हिटलर। साथ ही यह इतिहास आगे होने वाली घटनाओं को ठीक ठीक न समझने वाले तथा साहसिक निर्णय करने में असमर्थ ब्रिटिश और फ्रेन्च राजनीतिज्ञों की असफलता की दु:ख भरी कहानी है। पार्लामेण्ट के अनुदार दल के एक सदस्य का कहना है 'यह कहानी अव्यवस्था तथा भीषण भूलों से भरी हुई है जिनकी कोई समानता नहीं। उस नीति की अन्य बातों के साथ इसका मेल अच्छी तरह हो जाता है जिसके प्रवाह में ५ वर्ष से अधिक काल तक बहते हुए हम लोग पूर्ण सुव्यवस्था तथा रक्षा के स्थान से हटकर आज घातक संकट में पड़े हुए हैं'।

२०वीं शताब्दि के संसार का सबसे विलक्षण पुरुष सम्भवतः हिटलर ही है। हिटलर की कुछ अंशों में नेपोलियन के साथ तुलना की जा सकती है लेकिन नेपोलियन के विशाल व्यक्तित्व को भी वह ढाक देता है। नेपोलियन और हिटलर में सबसे सूक्ष्म अन्तर यह है कि नेपोलियन बड़ा भारी अहंम्मन्य

था और हिटलर भी यद्यपि अहंम्मन्य है, लेकिन उसने अपना व्यक्तित्व एक दम जर्मनी में लीन कर दिया है। वह जर्मनी का प्रभुत्व यूरोप पर क्या सारे संसार पर आरोप करना चाहता है। अपने इस उद्देश्य की प्राप्ति में उसे कोई भी साधन अग्रहणीय नहीं है, सबका उपयोग करने को वह प्रस्तुत रहता है। कठोर युद्ध की बर्बरता तथा निर्लज्ज झूठ का उसके यहां कोई अर्थ नहीं है।

अपनी आत्म कथा 'मीन कैम्फ' में हिटलर ने इस सिद्धान्त का प्रतिपादन तथा उसके विस्तृत रूप से उल्लेख किया है कि बुद्धिमान तथा विजेता अपने समयानुसार क्रमशः अपना उद्देश्य बनाते जाते हैं। शक्ति हाथ में आने के बाद से उसकी सारी क्रियाशीलता उपर्युक्त कथन की विलक्षण आलोचना है। हाथ में शासन की बागडोर आने के पहले लिखित अपनी आत्मकथा में जिस विस्तृत योजना का कार्य रूप में परिणत करने के लिये उसने जिक्र किया था उसे उद्योग करना भी प्रारम्भ कर दिया था। हिटलकर के हाथ में शासन आने के बाद की घटनाओं का वर्णन संक्षिप्त रूप में करना हम आवश्यक समझते हैं क्योंकि इससे स्पष्ट हो जायगा कि संसार किस प्रकार मन्द चाल से किन्तु अवाधिगति से निश्चित विनाश की ओर बढ़ता आ रहा है।

जनवरी ३० सन् १९३३ में हिटलर जर्मनी का चान्सलर

हुआ। उसे कितने ही भारी भारी काम करने थे। दूसरे देशों पर अधिकार विजय करने के उसके उद्देश्य के अनुकूल जो पहला काम उसके सामने था, वह था गृह मोरचे को दृढ़ करना, जर्मनी को नाजी जर्मनी का रूप देना, तथा वीमर की प्रजातंत्रात्मक सरकार के स्थान पर राष्ट्रीय समाजवादी सरकार की स्थापना करना।

उस समय नाजीवाद का कट्टर शत्रु वर्गवाद था। राइखस्टैग में इस दल के वहुत से सदस्य थे। अच्छे या बुरे, किसी भी प्रकार से इस दल का विनाश करना आवश्यक था। २७ फरवरी को, निस्सन्देह कुछ नाजी नेताओं के संकेत से राइखस्टैग भवन जला कर खाक कर दिया गया। सम्भवतः मार्शल गोयेरिंग का भी इसमें हाथ था। इसके लिये वर्गवादियों पर दोषारोपण किया गया तथा इन पर से विश्वास उठा देने के लिये जवर्दस्त प्रचार काम शुरू हुआ। मन चाही वात होकर रही। थोड़े दिन वाद चुनाव में वर्गवादियों की संख्या एक दम कम हो गयी। नाजीदल को वहुत अधिक वोट मिले। नये सभा भवन में एक विल (Enabling Bill) पास हुआ जिसके अनुसार हिटलर को चार वर्ष के लिये अधिनायक वना दिया गया। इसके वाद नाजीदल वालों ने विरोधियों को चुनचुनकर नष्ट करने का काम प्रारम्भ किया। सन् १९३४ तक जर्मनी पूर्ण रूप से नाजी होगया। उसी साल के अगस्त मास

५

में प्रेसिडेण्ड हिण्डेनवर्ग की मृत्यु होगयी और हिटलर ने अपने को प्रेसिडेण्ट तथा चान्सलर दोनों ही घोषित कर दिया। हिटलर की प्रभुत्व की विजय अब पूर्ण होगयी।

अब जर्मनी ने अपने को अस्त्रशस्त्र से युक्त करने का काम प्रारम्भ किया। फ्रान्स तथा अन्य राष्ट्रों की मुर्खतापूर्ण नीति तथा उनकी विद्वेष भावना के कारण जर्मनी को पुनः शस्त्रधारण करने का वहाना मिल गया। सन्धि की शर्तों ने जर्मनी की सामरिक शक्ति पूर्ण रूप से सीमित कर रखा था। लेकिन सन्धि की उन्हीं शर्तों में एक यह भी शर्त थी कि मित्रराष्ट्र भी अपनी सामरिक शक्ति धीरे धीरे कम करते रहेंगे। मित्रराष्ट्रों ने सन्धि की इस शर्त के विपरीत खूब खुल कर शस्त्रीकरण किया। विशेष कर सन् १९३० के बाद यह काम वढ़ गया। इंगलैण्ड, फ्रान्स और अमेरिका का शस्त्रास्त्रों का खर्च प्रत्येक वर्ष वढ़ता ही गया। सन् १९३३ में निरीशस्त्रकरण सम्मेलन असफल होकर भंग होगया। जर्मनी सम्मेलन से तथा राष्ट्रसंघ (League of Nations) से तुरन्त अलग होगया। और हिटलर ने शासन की वागडोर अपने हाथ में लेते ही गोयेरिंग को संसार के सर्व श्रेष्ट तथा सर्व शक्ति सम्पन्न हवाई सेना के निर्माण की आज्ञा दी।

अगले साल जर्मनी में वड़ी तेजी के साथ शस्त्रीकरण होने लगा। सन् १९३६ के शरद काल में श्री फांसिस विलियम्स ने

जो इस समय दैनिक ब्रिटिश समाचार पत्र "डैलि हेराल्ड" के आर्थिक विषयों का सम्पादक थे, हिसाब लगाकर दिखलाया कि मार्च सन् १९३३ से जुलाई सन् १९३६ तक जर्मनी ने अस्त्र शस्त्र पर २,४०,००,००० पौण्ड खर्च किया। इसका अर्थ यह है कि शस्त्रास्त्रों पर सन् १९२४ से लेकर सन् १९३५ तक के ग्यारह साल की अवधि में ब्रिटेन ने जितना खर्च किया था उसके दूना से अधिक तथा सन् १९२० से लेकर सन् १९३५ तक के सोलह वर्ष के समय में पेनसन इत्यादि छोड़ कर शस्त्रास्त्रों पर जो कुछ खर्च ब्रिटेन ने किया था उससे भी कहीं अधिक खर्च जर्मनी ने नाजी शासन के अपने प्रथम तीन वर्षों में किया।

शान्ति के समय किसी भी अन्य राष्ट्रने इतने कम समय में युद्ध की इतनी अधिक सामग्री एकत्रित नहीं की थी।

आश्चर्य की बात है कि न तो इंगलैण्ड ने और न तो फ्रान्स ने ही जर्मनी के इस पुनः शस्त्रीकरण को रोकने का कोई संगठित प्रयत्न किया। ऐसा क्यों? इसका कारण तथा इसकी व्याख्या के लिये कहीं दूर जाने की आवश्यकता नहीं। ब्रिटेन की उदासीनता का कारण यह था कि वह नहीं चाहता था कि यूरोप में फ्रान्स की सामरिक शक्ति अधिक बढ़ जाय। वर्गवादी विरोधी जर्मनी के प्रति इंगलैण्ड के अनुदार दल की भी, जो इस समय शासन करता था, सहानुभूति थी और फ्रान्स बिना इंगलैण्ड की सहायता के जरा भी हिलना डुलना नहीं चाहता था।

शस्त्रीकरण के साथ साथ जर्मनी की शक्ति धीरे धीरे बढ़ती गयी। यूरोपियन राष्ट्रों की कमजोर इच्छा तथा उनके मतभेद से लाभ उठाते हुए हिटलर ने जनवरी सन् १९३५ से लेकर सितम्बर सन् १९३८ तक सार, राइनप्रदेश, स्पेन, आस्ट्रिया, तथा सुडेटेन प्रदेश को जर्मनी में मिला लिया। उसे इस काम के लिये अच्छे बहाने भी मिल गये। हिटलर ने बहानों को ढूढ़ ढूढ़ कर सामने तो रखा ही; सब से बढ़ कर आश्चर्य की बात तो यह है कि तब की युरोपियन राजनीतिज्ञ नेतायें भी ऐसे मालूम होते थे कि उस बहाने की यथार्थता में विश्वास कर लेते थे। जो भी हो, बात यह है कि किसी भी बड़े राष्ट्र ने हिटलर को रोकने की सफल कारवाई न की। अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति की उलझन तथा विभिन्न राष्ट्रों के विद्वेष में इसके कारण का पता मिल सकता है।

सन् १९३४ से फ्रान्स, जर्मनी को घेरने की कोशिश में था। सन् १९३५ में फ्रेञ्च राजनीति की यह चाल पूरे रूप में सामने आई। जनवरी सन् १९३५ में रोम में सन्धिपत्र (Rome Pact) पर इटली और फ्रान्स ने हस्ताक्षर किये जिसके अनुसार इटली जर्मनी का विरोध उस हालत में करने को तैयार होगा जब जर्मनी आस्ट्रिया को हड़पने की कोशिश करता। इसके बदले फ्रान्स ने अबीसीनिया पर इटालियन आक्रमण में तटस्थ रहने का वचन दिया। इस सन्धि की दूसरी शर्त से

ब्रिटेन के स्वार्थ को धक्का पहुंचता था इसलिये फ्रान्स और इंगलैण्ड के सम्बन्ध में भी तनातनी बढ़ गयी।

२ मई सन् १९३५ में फ्रान्को सोवियेट (Franco Soviet Pact) सन्धिपत्र पर हस्ताक्षर हुए। इसका मुख्य उद्देश्य स्पष्टतः जर्मनी को रोकना था। फ्रान्स ने चेकोस्लोवाकिया तथा पोलैण्ड से पहले ही सन्धि करली थी। अस्तु जर्मनी ने यदि सोचा कि गत महायुद्धके प्रारम्भ में जर्मनी को चारों ओर से घेरने का जो प्रयत्न हुआ था ठीक वैसा ही अब भी हो रहा है, तो इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं है।

सन् १९३५ के प्रारम्भ में अबीसीनिया पर आक्रमण करने तथा उसे अपने साम्राज्य में मिला लेने की तैयारी मुसोलिनी करने लगा। अबीसीनिया के सम्राट ने राष्ट्रसंघ से अपील की। राष्ट्रसंघ इस आक्रमण को रोकने तथा एक निरपराध देश के बचाने में सफल नहीं हो सका। इस आक्रमण के प्रतिकार में जिसमें अबीसीनिया की ओर से जरा भी छेड़खानी नहीं की गयी थी, राष्ट्रसंघ तथा खास कर ब्रिटेन और फ्रान्स की मनोवृत्ति से हिटलर को यह विश्वास हो गया कि वार्साई सन्धि का और भी उल्लघन करने में उसे डरने का कोई कारण नहीं है।

दस महीने बीत गये और साथ ही ब्रिटेन और फ्रान्स भी एक दूसरे से अलग होते गये। हिटलर उस अवसर की प्रतीक्षा में था जब ब्रिटेन और इटली ही की तरह ब्रिटेन और फ्रान्स में

भी एक दूसरे से तनातनी चरम सीमा पर पहुँच जाती तब एक दिन, वार्साई सन्धि की शर्तों की धज्जियाँ उड़ाते हुए ७ मार्च सन् १९३६ में राइन प्रदेश पर एकाएक उसने दुबारा सामरिक कब्जा कर लिया और उसके किलों में सशस्त्र फौज रख दिया। हिटलर के सैनिक तथा अन्य मित्र उसकी इस शीघ्रता के विरुद्ध थे। लेकिन उसके सारे सैनिक तथा राजनीतिक परामर्शदाताओं के आश्चर्य का ठिकाना न रहा जब उन्होंने देखा कि इस प्रकार कब्जा कर लेने का किसी ओर से जरा भी विरोध नहीं हुआ। इस प्रदेश पर अब हिटलर का अधिकार था। फ्रान्स की सीमा से लगे अपनी सरहद पर, इस मतलब से कि बाद में पूरब की ओर हाथ बढ़ाने का उसे पूरा मौका मिले, उसने मोर्चे-बन्दी शुरु की। इटली का रुख अपनी ही ओर देख हिटलर ने बर्लिन-रोम धुरी का ब्रिटेन और फ्रान्स पर एक दूसरे ही दृष्टि कोण से दबाव डालने के लिये निर्माण किया।

सन् १९३६ के ग्रीष्म काल में स्पेनमें गृह युद्ध शुरु हुआ। जैसे जैसे यह युद्ध बढ़ता गया वैसे वैसे हिटलर और मुसोलिनी विरोधी पक्ष की ओर से उसमें हस्तक्षेप भी बढ़ता गया और रूस स्पेन सरकार की ओर से कम भाग लेने लगा। इस भय से कि कहीं यूरोप भर में इस युद्ध की लपट फैलकर युद्धाग्नि प्रज्वलित न करदे, ब्रिटेन और फ्रान्स ने अहस्तक्षेप की नीति का अनुसरण किया। अन्तर्राष्ट्रीय विधान के अनुसार स्पेनिश

सरकार को अपनी रक्षा के लिये अस्त्र शस्त्र खरीदने तथा बाहर से मंगाने का पूरा अधिकार प्राप्त था। यदि ब्रिटेन और फ्रान्स ने इस न्याय और सत्य की रक्षा के लिये अपनी हस्तक्षेप की नीति से किंचित पृथक होकर स्पेनिश सरकार को मदद दी होती तो इटली और जर्मनी इस छोटी सी बात को युरोपियन युद्ध का रूप देने का साहस कभी न करते। इतना बड़ा ख़तरा वे हरगिज न उठाते।

जब स्पेन में गृह युद्ध आरम्भ हुआ था उस समय यद्यपि स्पेनिश सरकार का रूस के साथ कोई राजनीतिक सम्पर्क तक भी नहीं था फिर भी यह कहानी रची गई कि स्पेन में हिटलर और मुसोलिनी बोल्शेविक मत के विरुद्ध लड़ रहे हैं। इस कहानी से ब्रिटेन का अनुदार दल तथा फ्रान्स का प्रति-क्रिया वादी दल प्रसन्न हुए।

रूस के प्रति इंगलैण्ड और फ्रान्स के इस काल्पनिक भय ने उनकी आँखों पर इतना गहरा परदा डाल दिया था कि वे इस बात को जरा भी नहीं समझ सके कि हिटलर और मुसोलिनी, युरोपियन रंग मंच पर एक वड़े युद्ध के नाटक की तैयारी में हैं और स्पेन में वे लोग उसी का अभ्यास कर रहे हैं। जर्मनी में कुछ और भी नये अस्त्रों शस्त्रों का आविष्कार हुआ। जैसे टेकं और विमान। अधिकारी वर्ग अपने नये शस्त्रों की परख

करना चाहते थे। और स्पेनिश गृह कलह में जो कुछ परिणाम मिले उनसे वे पूर्ण सन्तुष्ट हुए।

स्पेनिश युद्ध ढाई वर्ष तक चला। अन्तमें जेनरल फ्रांको की जीत हुई। ऐसा मालूम हुआ कि फ्रान्स तीन तरफ से घिर गया है और उत्तरी अफ्रीका में जाने का उसका समुद्री मार्ग तथा भूमध्यसागर में होकर जाने का ब्रिटेन का समुद्री मार्ग भारी खतरे में पड़ गया है। उसी समय कोमिन्टर्न विरोधी आन्दोलन (Anti-Commintern Pact) ने जोर पकड़ना शुरू किया। फ्रान्स और इंगलैण्ड में कुछ लोगों ने इस बात को केवल महसूस ही नहीं किया बल्कि सार्वजनिक सभाओं में खुले आम घोषणा की कि यह आन्दोलन वस्तुतः केवल कोमिनटर्न विरोधी ही नहीं, ब्रिटेन और फ्रान्स के विरुद्ध भी है।

इस बीच हिटलर ने मध्य यूरोप की ओर से आँख नहीं बन्द कर लिया था। ११ जुलाई सन् १९३६ में उसने आस्ट्रो जर्मन सन्धि पत्र पर हस्ताक्षर किया था जिसके अनुसार आस्ट्रिया की स्वतंत्र सत्ता उसने स्वीकार की थी। ३० जनवरी सन् १९३७ को उसने राइखस्टैग में कहा कि तथा कथित आश्चर्य का युग अब बीत गया। १२ फरवरी सन् १९३८ को उसने आस्ट्रियन प्रधान मंत्री शुशनिग के सामने जुलाई सन् १९३६ के सन्धि पत्र का फिर समर्थन किया था। १० मार्च सन् १९३८ में

तद्कालीन लन्दनस्थित जर्मन राजदूत रिवनट्राप ने चेम्बरलेन और लार्ड हैलिफैक्स के साथ चाय पी थी। उन्होंने तब आस्ट्रिया का कुछ भी जिक्र नहीं किया था। उसी रात हिटलर ने सेना का संघटन प्रारम्भ किया और दूसरे दिन आस्ट्रिया जर्मनी में मिला लिया गया। वियना पर आक्रमणकारी विमानों के झुण्ड टूट पड़े तथा सशस्त्र सैनिक दस्ते वियना की दिशा में बढ़ने लगी। आस्ट्रिया ने आक्रमण का विरोध नहीं किया। अतः इसमें हस्तक्षेप का कोई प्रश्न नहीं उठ सकता था।

उसके बाद तुरन्त ही रूसी सरकार की ओर से लिटविनोफ ने, इस प्रकार के आक्रकण को भविष्य में रोकने का उपाय सोचने तथा यथार्थ योजना बनाने के लिये छोटे बड़े सभी राष्ट्रों का एक सम्मेलन करने का प्रस्ताव किया। स्पष्टतः उनके मस्तिष्क में अगला शिकार चेकोस्लोवाकिया मालूम होता था। ब्रिटिश सरकार ने इस प्रकार के सम्मेलन का विचार अस्वीकृत कर दिया।

जैसी कि उमीद थी, अब चेकोस्लोवाकिया की बारी आई। तीन ओर से उसे सेना ने घेर लिया। लेकिन चेकोस्लोवाकिया के पास लड़ने वाले विलक्षण सैनिक तथा बहुत अधिक गोले बारुद के कारखाने थे। इस युद्ध का विरोध करने तथा इसका मुकाबला करने का भी इसने दृढ़ संकल्प कर लिया।

६

चेम्बरलेन के नेतृत्व में ब्रिटिश अनुदार दल की नीति कभी इतनी असफल नहीं हुई थी जैसे की चेकोस्लोवाकिया के मामले में हुई थी। जर्मनी के इस तीव्र बढ़ाव से फ्रान्स पहले से ही चिढ़ा बैठा था। चेकोस्लोवाकिया को मदद पहुंचाने की प्रतिज्ञा रूस से करा ली गयी। रूसी परराष्ट्र सचिव लिटविनोफ़ तथा लन्दन स्थित रूसी राजदूत मेस्की ने ब्रिटेन को रूसी सहायता का आश्वासन दिलाया। लेकिन जर्मनी की सहानुभूति प्राप्त करने की इच्छा से ब्रिटिश अनुदार दल ने रूस के साथ बेरुखाई थी। फ्रान्स के लिये ब्रिटिश राजनीति के आगे झुकने के सिवा और कोई चारा नहीं था।

चेकोस्लोवाकिया के उत्तर सुडेटन प्रदेश था जिसमें जर्मन बस्ती बहुत अधिक थी। हिटलर ने इसमें हस्तक्षेप करना प्रारम्भ किया। पहले इस जर्मन बस्ती में उसने सुधार की माँग की, फिर उनके स्वायत शासन (autonomy) की और अन्त में उसे जर्मनी में मिला लेने की भी माँग पेश की गयी। पहले ही की तरह हिटलर की मांग के साथ साथ युद्ध करने का प्रदर्शन भी होता था।

यूरोपियन युद्ध बचाने के उद्देश्य से इंगलैण्ड और फ्रान्स ने बटवारे की योजना पेश की और चेक लोगों के सामने इसको रखा गया। साथ ही उन्हें चेतावनी भी दी गयी ताकि वे शीघ्र ही इसे स्वीकार करलें। युरोपियन युद्ध से इंगलैण्ड

और फ्रान्स कितना भय खाते थे, इसका अनुमान इस बात से लगाया जा सकता है। जैसा कि 'डेली मेल' अखबार ने कहा था, वाध्य होकर, लाचारी की हालत में चेक लोगों को प्रस्ताव स्वीकार करना पड़ा। पहले के साथियों तथा एक तरह से अपने निर्माण कर्ताओं की बात वे नहीं टाल सके। बहुत तीव्र विरोध के साथ अन्त में उन्हें झुकना पड़ा।

लेकिन हिटलर को इतने से ही सन्तोष कहां! गोडेसवर्ग में चेम्बरलेन को एक पत्र दिया गया। जिसमें चेक प्रदेश में और भी मांग पेश की गयी। इसका जवाब भी २४ घण्टे के अन्दर ही मांगा गया था। ऐसा मालूम हुआ कि युद्ध अब रोका नहीं जा सकता है।

राष्ट्रों ने धीरे धीरे सेना का संघटन भी आरम्भ कर दिया। इसी समय म्युनिख में चेम्बरलेन और दलादिये उड़ कर पहुंचे थे। यहाँ जो सन्धि हुई वह, गोर्डसवर्ग के प्रस्ताव जिसमें जेक लोगों के लिये जो माँग पेश की गयी थी उनसे कहीं खराब थी। दलादिये उसके लिये सहमत नहीं थे और 'मुझे यह स्वीकार नहीं है' कहने को तैयार थे। लेकिन मालूम होता है कि ब्रिटेन का दबाव उन पर अधिक पड़ा।

हिटलर का हस्ताक्षर लेकर चेम्बरलेन लन्दन लौट आये। भीड़ में इस हस्ताक्षर पत्र को उन्होंने बड़ी प्रसन्नता के साथ दिखलाया और कहा कि इसका अर्थ है हम लोगों के

समय में शान्ति। उन्होंने यह भी कहा कि यह सन्धि सम्मान के साथ हुई है।

अनुदार दल के एक प्रसिद्ध नेता एम० पी० ने तब कहा था कि सरकार को युद्ध और निर्लज्जता दो में से कोई एक चुनना है। उसने निर्लज्जता को ही चुना है। अब उसे युद्ध भी चुनना होगा। यह बात एक साल के अन्दर ही होगयी।

२६ सितम्बर को हिटलर ने राइखस्टैग में कहा कि यूरोप में मेरी यह अन्तिम प्रादेशिक मांग है। और २८ तारीख को चेम्बरलेन ने साधारण सभा में उसके जवाब में कहा कि मेरा विश्वास है कि हिटलर जो कहते हैं वह करेंगे भी।

हिटलर की शक्ति बहुत बढ़ गई। टाइम्स पत्र के २४ मार्च के अंक में छपा था, "बोहेमिया और मोरेविया में वहाँ की सेनाओं निशस्त्र करने के बाद जर्मनी को ३६ डिवीजन सेनाओं के समूचे शस्त्रास्त्र प्राप्त हुए, जो आधुनिक ढंग के तथा अत्यन्त अच्छे दर्जे के थे। मोटरगामी सामरिक दस्तें और भारी तोपें उसे बड़ी संख्या में प्राप्त हुई हैं। चेकोस्लोवाक सेना की मोटर-शक्ति इतनी अच्छी है जितनी जर्मनी सेना की नहीं। अब तक जर्मन सेना में स्कोडा कारखाने के विशेषज्ञों द्वारा निर्मित भारी तोपें नहीं थीं, और यह भी सम्भव है कि जर्मन सैनिक अधिकारी विजित देश की सामरिक सामग्री से अपनी सेनाओं को सुसज्जित करे। अनुमानतः जर्मनी के तोपों की

संख्या इससे पहले से दूनी हो जायगी। चेकोस्लोवाकिया की वायु-सेना में सब तरह के १७०० से कुछ अधिक वायुयान हैं। ...चेक प्रान्तों पर कब्जा करने से जर्मनी को तीन प्रथम श्रेणी शस्त्रास्त्र के कारखाने, जो संसार के बड़े से बड़े कारखाने में से है, और कम से कम एक बहुत बड़ा गैस का कारखाना प्राप्त हुआ है"

सबसे बड़ी बात तो यह हुई कि स्लोवाकिया पर कब्जा कर लेने के बाद हिटलर को उत्तर में पोलैण्ड पर चढ़ाई करने के लिये २०० मील का मोर्चा मिल गया और अब पोलैण्ड तीन ओर से जर्मनी द्वारा घिर गया।

चौथा अध्याय

—इङ्गलैण्ड, जर्मनी और रूस—

रूस की राजनीति और अन्तर्राष्ट्रीय नीति में पश्चिमी लोक-तन्त्रवादी देशों विशेषतः इङ्गलैण्ड के प्रति उसका अविश्वास झलकता है। हिटलटर के शासनसूत्र हाथ में लेने के बाद रूस का भय बढ़ने लगा और उसने संयुक्त मोर्चा बनाने के लिए ब्रिटेन और फ्रान्स से कई बार प्रस्ताव किये पर वे सब ठुकरा दिये गये। रूसने यह स्पष्ट रूपसे देख लिया कि ब्रिटेन और फ्रान्स चाहते हैं कि जर्मनी का बढ़ाव पूर्वी यूरोप में ही हो। अतः रूस चाहने लगा कि जर्मनी का बढ़ाव पश्चिम की ओर ही हो।

रूसके दृष्टिकोण को अच्छी तरह समझने के लिए यह जरूरी है कि रूस की बार बार निराशा पूर्ण असफलताओं पर विचार किया जाय। सन् १९३४ में रूस राष्ट्रसंध में सम्मि-लित हुआ। तब से साढ़े चार वर्ष तक रूस के परराष्ट्र सचिव श्री लिटविनोफ जिनोवा में अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति के प्रधान व्यक्तियों में एक बने रहे। किन्तु आक्रमणों को रोकने के लिये दृढ़ता पूर्वक करने के पक्षमें उन्होंने जिन कड़े शब्दों का प्रयोग किया उनका कुछ भी असर नहीं हुआ और उनके व्यावहारिक

प्रस्ताव कभी स्वीकृत नहीं हुए। हिटलर ने जब वियना (आस्ट्रिया) पर अचानक आक्रमण किया, उसके बाद श्री लिट-विनोफ ने यह प्रस्ताव किया कि शान्ति चाहने वाले देशों के प्रतिनिधियों का एक सम्मेलन किया जाय, पर उनका यह प्रस्ताव भी स्वीकार नहीं किया गया। चेक-काण्ड के अवसर पर भी रूस से कुछ भी नहीं पूछा गया, उसका बुरी तरह निरादर किया गया। म्यूनिख समझौता के बाद रूसी अधिकारियों ने एक तरह से निश्चित कर लिया कि पश्चिमी लोकतंत्रवादी देशों और जर्मनी को आपस में निपटने के लिये छोड़ कर रूस अपनी रक्षा की योजना में सब शक्ति लगा दे। किन्तु इस निश्चय के कारण श्री लिटविनोफ और स्टालिन में मत भेद हो गया।

सन् १९३९ में जब हिटलर ने प्रेग पर अचानक हमला किया और ऐसा मालूम पड़ने लगा कि अब जर्मनी शीघ्र ही रूमानिया पर भी टूटेगा उस समय लिटविनोफ ने अपना अन्तिम प्रयत्न किया। उन्होंने प्रस्ताव किया कि संयुक्त मोर्चा बनाकर आक्रमणों को रोकने के लिये बुखारेस्ट में ६ देशों के प्रतिनिधियों का सम्मेलन तुरन्त किया जाय। इस प्रस्ताव को भी ब्रिटिश सरकार ने बहाने बना कर अस्वीकार कर दिया।

अब हमें रूस-फ्रान्स-ब्रिटेन के बीच होने वाली समझौते की बात चीत पर विचार करना है। हिटलर के चेकोस्लो-

वाकिया पर हमला करने और उसका अंग-भंग करने के बाद ब्रिटिश प्रधान मंत्री श्री चेम्बरलेन जैसे नींद से उठे। वस्तुतः ब्रिटिश जनता तथा फ्रेंच सरकार ने उनके नाकों दम करके शान्ति के मधुर सपनो वाली नींद से उन्हें जगा दिया। युद्ध की तैयारी करने के लिये उन्हें विवश होना पड़ा। फ्रान्स से दवाव पड़ने पर ब्रिटिश सरकार ने सेना में आम-भरती के लिए एक कानून पास किया। फ्रेंच सरकार ने ब्रिटिश सरकार पर इस वात के लिए भी दवाव डालना शुरू किया कि रूस के साथ सन्धि कर लिया जाय। ब्रिटेन को यह वात माननी पड़ी यद्यपि अनुदार-दल के मंत्रिमण्डल को यह वात पसन्द न थी।

रूस-फ्रान्स-ब्रिटेन के बीच सन्धि की बात चीत कछुए की गति से चलने लगी। बात चीत वस्तुत प्रारम्भ ही से विरोधी ध्येयों को ध्यान में रख कर शुरू हुई थी। ब्रिटिश फ्रेंच-प्रतिनिधियों को कुछ अधिकार भी नहीं प्राप्त था और बात बात में उन्हें लन्दन पेरिश से सलाह लेनी पड़ती थी और रूसकी शर्तें वहाँ भेजनी पड़ती थी। जब रूसने यह माँग पेश की कि कोई अधिकार प्राप्त व्यक्ति भेजा जाय और इसके लिये उसने परराष्ट्र मंत्री लार्ड हेलीफैक्स के पास अर्ध-सरकारी निमंत्रण भी भेजा, तो श्री चेम्बरलेन ने इसे अस्वीकार कर दिया। लार्ड हेलीफैक्स की जगह परराष्ट्र विभाग के एक अफसर

श्री स्ट्रैंग भेजे गये। उन्हें भेज कर बहुत बड़ी गलती की गई। रूस इससे क्रुद्ध हो उठा। सन् १९३९ के मध्य जून से मध्य अगस्त तक यह बातचीत धीरे धीरे चलती रही। इसके बाद सैनिक अफसरों की बातें शुरू हुईं। तत्कालीन रूसी परराष्ट्र मंत्री श्री मालोटोव ने प्रस्ताव किया कि ब्रिटेन फ्रान्स के स्थल-जल और नौ सेना के प्रतिनिधियों का एक मण्डल मास्को आवे। बात स्वीकार कर ली गई। किन्तु फिर एक दूसरी बड़ी गलती हुई। जो सैनिक प्रतिनिधि भेजे गये वे प्रधान अफसर नहीं थे और वायुयान या किसी प्रगतिवान युद्धपोत से न रवाना होकर एक मामूली स्टीमर से रवाना हुए जिसे रूसियों ने नाराज होकर 'माल ढोने वाला' जहाज कह कर पुकारा। रूसियों ने इन प्रतिनिधियों को देखकर कहा, 'हम लोग समझते थे कि मार्शल गेमलिन (फ्रेंच सेनापति) और मार्शल गोर्ट (ब्रिटिश सेनापति) यहाँ आरहे हैं। किन्तु यहाँ ऐसे व्यक्ति भेजे गये हैं जिनका समुचित परिचय भी हमें नहीं प्राप्त है'।

खैर, सैनिक प्रतिनिधियों के बीच बातचीत शुरू हुई। रूसियों ने इस बात को दिलचस्पी और सहानुभूति के साथ सुना कि यदि जर्मनी के साथ युद्ध छिड़ा तो ब्रिटेन-फ्रान्स क्या करेंगे। रूसी प्रतिनिधियों ने एक के बाद दूसरी जो शंकाएं उपस्थित की उनका उत्तर उन्हें न मिल सका।

अब ऐसा मालूम पड़ने लगा कि प्रमुख प्रश्न यह है कि रूसी और ब्रिटिश राजनीतिज्ञों में परस्पर विश्वास नहीं है। यह भी अफवाह थी कि ब्रिटिश सरकार साथ ही साथ हिटलर के साथ भी सन्धि की बात चीत कर रही है। यह शंका इस बात से और बढ़ गई कि ब्रिटेन अपनी बातों पर अड़ गया था और जर्मनी के दो कट्टर शत्रु श्री ईडेन और श्री चर्चिल को मंत्रि-मण्डल में आने से श्री चेम्बरलेन ने इन्कार कर दिया था।

बाद को पता चला कि रूस दो शर्त्तों को लेके समझौते की बात चीत कर रहा था, इस सन्धि के बाद इनमें से कोई देश किसी दूसरे बाहरी देश के साथ बिना शेष दो की अनुमति के समझौता नहीं कर सकता। यदि लड़ाई शुरू हो गयी तो ब्रिटेन के साथ ही रूस भी सैनिक कार्रवाई शुरू कर देगा। दूसरे शब्दों में रूस फिर म्यूनिख-काण्ड की पुनरावृत्ति नहीं चाहता था जिससे ब्रिटेन फ्रान्स उसे अकेले छोड़ कर निकल जाते।

इन कारणों से रूसने ठोस प्रस्ताव रखे। एक प्रस्ताव या योजना यह भी थी कि रूसी लाल सेनाएँ जर्मन सेना का सामना करने के लिये उत्तर पूर्व में विलना से तथा दक्षिण पूर्व में प्लाव से होकर पोलैण्ड में प्रवेश करेंगी। जब ये प्रस्ताव पोलैण्ड के पास भेजे गये तो उसने इसे अस्वीकार कर दिया। फल स्वरूप ब्रिटेन-फ्रान्स-रूस के बीच समझौता की बात चीत टूट गई।

श्री मालोटोव ने जर्मनों को त्रस्त करने के लिये ब्रिटिश-फ्रेंच सैनिक अधिकारियों के साथ बात चीत कर के अत्यन्त बुद्धिमानी का काम किया था। यह ज्ञात नहीं है कि जर्मनी और रूस के राजनीतिज्ञों के बीच समझौते की बातें कितने दिन तक चलती रहीं। किन्तु दो प्रतिद्वन्दियों के साथ समझौते की बातचीत करके रूसने अत्यधिक लाभ उठाया। जर्मनी ने रूस से कुछ अधिक माँग नहीं की, वह केवल यही चाहता था कि रूस तटस्थ होते हुए उसका शुभेच्छु बना रहे। उन्होंने रूस को दिया अधिक, उसका आदर अधिक किया और फलतः वह रूस के साथ समझौता कर पाने में सफल हुए।

पहले की बातों के बारे में चाहे जो कहा जाय पर अन्त में तो रूस की चालाकी से ब्रिटेन को मुंह की खानी पड़ी। रूसने ब्रिटेन से अपने अपमान का बदला भी लिया और वह बदला था युद्ध के रूप में।

पाचवां अध्याय

—घटनायें जिनसे युद्ध शुरू हुआ—

जर्मनी और पोलैण्ड के बीच की कटुता जो वर्तमान युद्ध की कारण हुई, कोई नई बात नहीं है। नेपोलियनिक युद्ध के बाद जब से जर्मनों ने पोलैण्ड के अधिकांश मार्ग पर कब्जा किया और जबसे अपनी पोलिश प्रजा को अधीन रखने के लिये ज़ारशाही रूस से हाथ मिलाया तभी से यह कटुता चली आती थी।

गत महायुद्ध के छिड़ने पर जर्मन सरकार पोलों से यह वादा किया कि उनका प्राचीन राज्य उन्हें लौटा दिया जायगा। फिर वार्साई की सन्धि ने एक नये पोल-रियासत की स्थापना की। लेकिन इस सन्धि ने जर्मनी को दो हिस्सों में विभक्त कर दिया। फल स्वरूप जर्मनी और पोलैण्ड में तनातनी वनी रही, जैसा कि सन्धि-विधान वनाने वालों की इच्छा थी। जब शासन सूत्र हिटलर के हाथ में आया तब वह पहले से ही विरोध भावना से भरा हुआ था।

पोलैण्ड का पश्चिमी पड़ोसी यदि इतनी जबर्दस्ती करता था तो उसका पूर्वी पड़ोसी भी उससे कुछ कम नही था। सन् १९२१ में रूस और पोलैण्ड में युद्ध हुआ। बोल्शेविक रूसको संकट

में देखकर पोलैण्ड ने उस पर हमला किया था। लाल सेना ने उसे बुरी तरह पीछे भगा दिया था। बाद में फ्रान्स की मदद से रूसको पोलैण्ड ने गहरी शिकस्त दी थी। मतलब यह कि रूस और पोलैण्ड का सम्बन्ध चाहे जैसा भी क्यों न रहा हो लेकिन अच्छा नहीं थी।

दो शक्ति शाली राष्ट्रों के बीच घिरे हुए पोलैण्ड को ऐसा अनुभव हुआ जैसे उसका दम घुट रहा हो। अपनी स्पष्ट नीति निर्धारित करना उसके लिये कठिन मालूम पड़ने लगा। सबसे चिन्ता जनक बात तो यह थी कि पूंजीवादी यूरोप और रूसमें युद्ध छिड़ने पर पोलैण्ड को बरबस रण क्षेत्र बनना पड़ेगा। अतएव पोलैण्ड की परराष्ट्र नीति केवल यही रह गयी थी कि कभी वह जर्मनी के विरुद्ध रूससे मेल करना और कभी रूसके विरुद्ध जर्मनी से। इसका अर्थ यह था कि वह अपनी रक्षा के लिये उन दोनों में से किसी को शक्ति-शाली होने देना नहीं चाहता था।

पोलैण्ड के साथ एक दूसरी दिक्कत यह थी कि वह सुगठित राष्ट्र नहीं था। पोलों की संख्या यद्यपि अधिक थी, पर दूसरे अल्प संख्यक जैसे युक्रेनियनों, सफेद रूसियों आदि की भी अधिकता थी। पोलैण्ड में कुछ जर्मन भी थे। फिर एक पांव समुद्र में फैलाये हुए पोलैण्ड ने जर्मनी को दो हिस्सों में बांट रखा था जिससे झगड़े की सम्भावना का कारण हर घड़ी

मौजूद था। फ्रेंच राजनीतिज्ञों ने ऐसा करते समय यह सोचा था कि जर्मनी और पोलैण्ड इस प्रकार विभक्त होकर एक दूसरे से लड़ते रहेंगे।

म्यूनिख समझौते के बाद, जब चेकोस्लोवाकिया का अंग भंग कर दिया गया था और हिटलर ने प्रेग पर हमला करके चेक राज्य का दूसरा भाग भी अपने राज्य में मिला लिया था, पोलैण्ड ने अत्यन्त बेशर्मी के साथ उसके सरहद के एक और प्रदेश पर कब्जा कर लिया था। उस प्रदेश में स्लोक आबादी के कारण रूसने बड़ी दृढ़ता के साथ इसका विरोध किया था लेकिन पोलैण्ड अड़ा रहा।

जर्मन ने मध्ययूरोप में अपनी स्थिति दृढ़ करली तब उसने अपना ध्यान डान्जिग की ओर देना शुरू किया। डान्जिग जर्मन नगर था, जर्मनी के वाणिज्य तथा व्यवसाय से इसका निर्माण हुआ था। पूर्वी और पश्चिमी जर्मनी को मिलाने वाले प्रदेश पर भी जर्मनी की आँख थी। जब पोलैण्ड की आँख खुली तो पूर्व और पश्चिम की स्थिति से वह एक दम भयभीत हो गया। वह अपने पुराने मित्र फ्रान्स और इंगलैण्ड की तरफ मुड़ा। दोनों देशों में बढ़ती हुई नाजी शक्ति को रोकने का निश्चय दृढ़ता के साथ बढ़ रहा था। पोलैण्ड के परराष्ट्र सचिव कर्नल बेक इस मामले में सलाह मसविरा करने के लिये स्वयं फ्रान्स पहुंचे।

कर्नल वेक की पेरिस यात्रा आशा से अधिक सफल रही। फरवरी में वारसा से यह खबर सुनी गयी कि वे शीघ्रही लन्दन भी जांयगे। २१ मार्च को ब्रिटिश प्रतिनिधि मण्डल कर्नल वेक से साधारण मामलों पर विचार विनिमय करने के लिये वारसा पहुंचे—२२ मार्च को लन्दन से यह समाचार सुना गया कि पोलैण्ड ने हिटलर की बढ़ती हुई शक्ति को रोकने के घोषणा पत्र पर हस्ताक्षर करने के बदले ब्रिटेन से सामरिक समझौता करने की प्रार्थना की है। यह भी सूचित किया गया कि पोलैण्ड ने रूस से भी सहायता चाही थी, लेकिन सोवियट रूसने इस बात की निश्चित जानकारी बिना कि फ्रान्स और इंगलैण्ड वस्तुतः जर्मनी के बढ़ाव को रोकने में सक्रिय रूपसे काम करने को तैयार हैं या नहीं, इस मामले में पड़ने से इनकार कर दिया।

थोड़े ही दिन बाद वारसा से यह समाचार मिला कि पोलैण्ड में व्यवसाय बढ़ाने की नयी योजना में सहायता पहुँचाने के लिये पौलैण्ड और ब्रिटेन में व्यापारिक समझौते का द्वार खुला है। कुछ ही हफ्ते बाद ३० मार्च सन् १९३९ को ब्रिटिश प्रधान मंत्री चेम्बरलेन ने पोलैण्ड पर जर्मन आक्रमण की दशा में फ्रेंच और ब्रिटिश सैनिक सहायता की प्रतिज्ञा की।

अगले महीनों में कोई योजना सामने नहीं आई, पोलैण्ड ने भी जवाब में अपनी ओर से पूरी गारन्टी दी। लेकिन

इसके आगे कुछ नहीं हुआ। पोलैण्ड का एक आर्थिक प्रतिनिधि मण्डल कर्ज के लिये लन्दन पहुंचा लेकिन कर्ज नहीं मिला। युद्ध सामग्री खरीदने की बात पर पोल-प्रतिनिधियों को यह उत्तर मिला कि ब्रिटेन के पास केवल उतनी ही युद्ध सामग्री है जितनी की आवश्यकता है। इसलिये कुछ भी युद्ध सामग्री बेची नहीं जा सकती। तब पोलों ने अमेरिका से विमान तथा अन्य सामग्रियां खरदनी चाही लेकिन ब्रिटेन ने कर्ज देने से इनकार कर दिया।

सामरिक प्रतिनिधियों से भी कोई सफल बात नहीं हुई। जुलाई में जेनरल आयरनसाइड वारसा गये। उनके साथ बहुत कम प्रतिनिधि थे और वे बहुत थोड़े दिन वहां रहे। पोलिश सेना नायक मार्शल स्मिगली रिडज ने उनसे व्यर्थ तथा अस्पष्ट बातें की। सीमा पर तथा वग और विस्थुला नदीयों की आसानी से रक्षा की जा सकने वाली लाइन पर मोरचेबन्दी करने से उन्होंने इनकार कर दिया।

उन्होंने कहा था कि इस प्रकार की मोरचेबन्दी हमारे बढ़ाव में बाधक होगी। उन्होंने युद्धकी हालत में जर्मनी के बड़े पैमाने पर घुड़ सवार द्वारा हमला करने की बड़ी बड़ी बातें की। पोलिश सेना का नायकत्व करने के लिए वे बिल्कुल अयोग्य थे।

जब ब्रिटेन ने पोलैण्ड को गारन्टी दी तो हिटलर ने भी क्रुद्ध होकर ५ वर्ष पुराने जर्मन-पोलिश अनाक्रमण-सन्धि को भी

तोड़ दिया । सन् १९३९ के ग्रीष्म काल तक जर्मनी के समाचार पत्रों का पोलैण्ड पर आक्षेप बढ़ता गया और जर्मनी का दबाव भी उग्र होता गया। फ्रान्स और इंगलैण्ड के बल पर पोलैण्ड ने जर्मनी के दबाव के सन्मुख झुकने से अस्वीकार कर दिया। इस समय तक इंगलैण्ड-फ्रान्स और रूसमें भी समझौते की चर्चा शुरू हो गयी थी जिससे पोलैण्ड की हिम्मत और बढ़ गया।

बहुत से प्रस्तावों तथा जवाबी प्रस्तावों, और धमकियों तथा जवाबी धमकियों के बाद ३१ अगस्त सन् १९३९ को हिटलर ने पोलैण्ड के पास चेतावनी के ढंगका एक प्रस्ताव भेजा जिसमें १६ शर्तें थीं। जैसा कि उस प्रस्ताव में कहा गया था, पोलैण्ड ने बर्लिन में अपना कोई दूत या प्रस्ताव भेजने के बदले, अपनी ४० लाख सेना को जर्मन सैन्य सञ्चालन के जवाबी युद्धके लिये भेजना शुरू कर दिया। १ सितम्बर के प्रातःकाल बिना युद्धकी घोषना किये जर्मन सेना ने पोलैण्ड पर अपने सुविचारित हमले का कार्यक्रम कार्य रूपमें प्रारम्भ कर दिया। इसके बादही ब्रिटेन ने जर्मनी को 'अल्टिमेटम' दिया कि वह पोलैण्ड से अपनी सेना हटा लें अथवा ४८ घण्टे के अन्दर जवाब दें। घोषित अवधि के बीत जाने पर ३ सितम्बर सन् १९३९ को ११ बजे दिनमें ब्रिटेन ने जर्मनी के विरुद्ध युद्धकी घोषणा करदी। ६ घण्टे के बाद फ्रान्स ने भी ब्रिटेन का अनुकरण किया।

छठवां अध्याय

—राष्ट्रों की सामरिक शक्ति—

विगत महायुद्ध में युद्ध का उद्देश्य यह बताया जाता था कि युद्ध को सदैव समाप्त कर देने के लिये ही वर्तमान युद्ध लड़ा जा रहा है। किन्तु यह निर्मम परिहास की बात थी कि युद्ध के बाद से ही प्रत्येक राष्ट्र अत्यंत भयंकर अस्त्र शास्त्रों से अपने शस्त्रागार भरने लगे मानों सब राष्ट्र एक दूसरे को महानाश के अतल गर्भ में ढकेल देने के लिये तुल गये हों।

हिटलर के शासन-सूत्र हाथ मे लेने से कुछ समय पहले ही राष्ट्रों में शस्त्रीकरण की दौड़ शुरू हो गयी थीं। गत युद्ध के पूर्व इङ्गलैण्ड और फ्रान्स शस्त्रीकरण पर जितना खर्च करते थे उससे ३० प्रतिशत अधिक वे इस समय सन् १९३० में खर्च करने लगे थे। साथ ही संयुक्तराष्ट्र, अमेरिका, इटली और जापान भी पहले से कई सौ गुना अधिक धन शस्त्रीकरण में लगा रहे थे। सन् १९३४ में जर्मनी भी इस दौड़ में सम्मिलित हो गया और अत्यन्त तीव्र गति से कुछ ही दिनों में अपने प्रतिद्वन्द्वि की बराबरी पर पहुँच गया। और कुछ दिनों बाद वह सब को पीछे छोड़ बहुत आगे निकल गया। सन् १९३३ से लेकर १९३६ तक जर्मनी

ने औसतन प्रति वर्ष ९० करोड़ पौण्ड शस्त्रीकरण में खर्च किया ; इसी अवधि में ब्रिटेन और फ्रान्स ने क्रमशः ५३ करोड़ ५० लाख पौण्ड और ४५ करोड़ ५० लाख पौण्ड औसतन प्रति वर्ष व्यय किया।

इस प्रतिद्वन्दिता के रंगमंच का केन्द्र जर्मन सेना है और महत्व की दृष्टि से यूरोप के मध्य में स्थित होने से भी वह केन्द्र में ही है। इस समय जर्मन सेना मे करीब ३० लाख जर्मन और ढाई लाख स्लोवाक सैनिक तैयार थे। आवश्यकता पड़ने पर १० लाख और जर्मन सैनिक तैयार हो सकते थे। चेकोस्लोवाकिया से छीनी गयी युद्ध सामग्री मिलजाने के बाद इस समय जर्मन सैनिक के अस्त्र-शस्त्र, यूरोप भर में आधुनिकतम था। वह जर्मन और चेक उद्योग धन्धों पर बहुत दिनों तक निर्भर रह सकती थी। इसके अतिरिक्त ९० लाख और जर्मन सेना में भरती किये जा सकते थे।

यद्यपि जर्मनी को तैयारी के लिये बहुत कम समय मिला, पर जर्मन सेना के अफसर बहुत ही चतुर हैं और सैनिकों की देख भाल भी बहुत अच्छी तरह होती है। उनकी शिक्षा व्यावहारिक और सामरिक ढंग से हुई है। जर्मन स्वभावतः सैनिक बनना चाहते हैं और वे प्रथम श्रेणी के सैनिक होते हैं। जानकार लोगों की राय है कि जर्मन सेना यूरोप में किसी अन्य देशों की सेना से घट कर नहीं है।

अधिकांश लोगों का यह कहना है कि आत्मरक्षा की दृष्टि से यूरोप में फ्रेंच सेना सर्वोत्तम है। जर्मनी सेना की भांति, इसकी आम भरती और शिक्षा में आज तक कभी रुकावट नहीं पड़ी। फ्रेंच सैनिक अफसर, और तोपखाने संसार में सबसे बढ़ कर हैं। उसकी कमी यही है कि उसकी सेना की तैयारी अधिकतर पुराने ढंग पर हुई है। उदाहरणार्थ, फ्रेंच टैंकों की गति २५ मील प्रति घंटा है किन्तु जर्मन टैंको की ५० मील प्रति घंटा है।

जब युद्ध शुरू हुआ, उस समय फ्रांस के पास २५ लाख तैयार सैनिक थे और २० लाख शिक्षित रिजर्व सेना में हाजिर होने के लिए बुलाए गये थे। फ्रेंच साम्राज्य में २ लाख सैनिक और तैयार थे। फ्रान्स की सैनिक शक्ति ८० लाख सैनिकों की थी।

ब्रिटेन के पास सदैव तैयार रहने वाले ढ़ाई लाख सैनिक हैं। करीब उतने अंशतः शिक्षित सैनिक और हैं। कुछ दिनों पहले वहां आम भरती शुरू हुई, उसके फल स्वरूप वहां ढाई लाख और सैनिक सीमित शिक्षण के साथ तैयार हो गये हैं। कहा जाता है कि ब्रिटिश अफसर बहुत अच्छे सैन्य संचालक होते हैं। गृह सेना के अतिरिक्त उसके पास औपनिवेशिक और भारतीय सेना भी बहुत बड़ी संख्या में मौजूद है। कुल संख्या ५० लाख होती है। इस ५० लाख सेना को अस्त्र शस्त्रों

से पूर्णत सज्जित करना अथवा उसे युद्ध भूमि में लाना ही एक महा कठिन काम है। यद्यपि ब्रिटेन आधुनिक यंत्रारूढ़ सेना में विश्वास रखता है, पर उसकी सामग्री अधिकतर पुराने ढंग की है।

पोलैण्ड के पास ३० लाख सैनिक थे। यह संख्या बहुत बड़ी तो अवश्य है पर वे सैनिक पुराने ढंग से केवल आत्मरक्षा सम्बन्धी युद्ध के लिए शिक्षित किये गये थे। यद्यपि वहां के सैनिक वीर होते हैं, पर उनके पास सामग्री कम थे, और उनके संचालक अच्छे न थे।

स्थल-युद्ध के अस्त्रों के मामले में जर्मनी का स्थान सबसे ऊँचा है। इस सम्बन्ध में जर्मन टैंक की आक्रमण और आत्मरक्षा की जो शक्ति मालूम हुई है, वह संसार के लिए एक नई चीज है। यद्यपि टैंक का आविष्कार इङ्गलैण्ड में हुआ, पर जर्मन उसका प्रयोग इस ढंग से कर रही है जिसने संसार को चकित कर दिया है। युद्ध प्रारम्भ होने से कुछ महीने पहले श्री चर्चिल ने एक लेख में जर्मनी की यांत्रिक शक्ति की हँसी उड़ाई थी और कहा था कि गत युद्ध में यद्यपि जर्मनों ने टैंको का भयंकर प्रयोग देखा था, पर वे स्वयं इसका प्रयोग न कर सके थे। चर्चिल के ये शब्द ब्रूमैरंग की तरह लौट कर अब उन्हीं के सेना पर लागू हो रहे हैं। इस युद्ध में जर्मनों ने टैंको का प्रयोग जिस ढंग से किया है, उससे बढ़कर आश्चर्य की

वात संसार के लिये और कुछ नहीं रही है। गत युद्ध में जर्मनी ने टैंको का सहारा आखिर में लिया था। पर इस बार जितने टैंक उसके पास है उतना और किसी के पास नहीं है। जर्मन टैंको की संख्या ६ से ९ हजार है और कुछ समय में ही यह संख्या दुगुना हो जायगा। फ्रान्स के पास इसके आधे टैंक होंगे और ब्रिटेन के टैंको की संख्या तो कुछ सैकड़ो में ही है।

इसके अतिरिक्त जर्मन सेना का यंत्रीकरण पूर्ण और समुचित रूप में हुआ है। हिटलर के युद्ध प्रेमी तथा मोटर-शक्ति के समान गतिमान मस्तिष्क वाला होने का ही यह परिणाम हैं कि उसने अपनी सेनाओं को गतिशील सेना (पहियों वाली सेना) वना दिया है। युद्ध-आरम्भ के पहले जर्मन सेना में १,३५,००० लारियां, ४० हजार मोटर गाड़ी, और ६० हजार मोटर साइकल थे।

आधुनिक तोपों के विषय में भी दो शब्द। सर्व प्रथम नेपोलियन ने इस वात को समझा था कि भविष्य में युद्धों में तोपों का क्या स्थान होगा। तब से फ्रेंच सेना में तोपखानों को पूर्ण वनाना एक नियम रहा है। गत युद्ध में तोपखानों की जितनी उन्नति हुई थी, उसके पहले कभी नहीं हुई। फ्रान्स की ७५ मिली मीटर फील्ड तोपें बहुत ही काम की सिद्ध हुईं। जर्मनी फील्ड और सीज तोपों का, जो वड़े आकार की थीं, प्रयोग करते थे। ये तोपे बहुत दूर तक और २७५ से १६००

पौण्ड वजन तक के गोले फेंक सकती थीं। गत युद्ध के पिछले भाग में तोपों के सम्बन्ध में जर्मन विशेषज्ञ समझे जाने लगे। सन् १९१६ में पहले पहल जर्मनो ने २५ मील की दूरी पर से जहाज पर से डंकर्क पर गोलावारी की। धीरे धीरे यह दूरी ६० मील होगई। सबसे बड़ा आश्चर्य लोगों को तब हुआ जब जर्मनी ने ७५ मील दूरी से पेरिस पर गोलावारी की। वर्तमान युद्ध में भी इंगलिश चैनेल के दोनों ओर से तोपों द्वारा गोलावारी हुई है और जर्मनी से अंग्रेज पीछे नहीं रहे।

स्थल की सामरिक तैयारियों का वर्णन तब तक पूर्ण नहीं समझा जा सकता जब तक कि फ्रेंच और जर्मन सीमाओं पर बनी दुर्ग पातों का वर्णन न किया जाय। फ्रेंच दुर्गपाँतक नाम है मैजिनो पाँत और जर्मन का सीगफ्रीड पाँत। वे कई मीलों को चौड़ाई में बनी दुर्ग पाँते हैं और दूर तक गुप्त दुर्गों से भरी जमीन फैली है।

युद्ध विषयक इंजिनियरिंग में ये पाँते अपना सानी नहीं रखतीं। गत युद्ध के अनुभवों के परिणाम स्वरूप इनका निर्माण हुआ है। उस समय यह मालूम हुआ था कि सुरक्षित खाई के युद्ध में बलवती सेना का मुकाबला किया जा सकता है। इन दुर्गपाँतों मे खाइयाँ, काँटे लगे तार, मशीन गनों के स्थान तथा कंकरीट और लोहे के बने टंक निरोधक खम्भे बने हैं। मैजिनों पाँत जमीन के बहुत नीचे, कहीं कहीं ९ मंजिल तक

नीचे बनी है। किन्तु सीगफ्रीड पाँत अधिकतर जमीन की सतह पर ही बनी है पर उसका विस्तार बहुत है, कहीं कहीं ३० मील तक है। वर्तमान युद्ध में इन दोनों पाँतों की शक्ति की परीक्षा का अवसर ही नहीं आया।

अब हम वायुयानों के विषय मे कुछ कहना चाहते हैं। मार्शल फोश यह अक्सर कहा करते थे कि गत युद्ध जहाँ समाप्त हुआ वहीं से अगला युद्ध आरम्भ होगा। यह कथन जितना हवाई युद्ध के विषय में ठीक उतरा है उतना और कहीं नहीं।

वर्तमान युद्ध में वायुयानों के उपयोग के बारे मे लोगो में मतभेद था। गत युद्ध में तो उनका प्रयोग मात्र हुआ। हिण्डैनबर्ग ने जैसा अपनी आत्मकथा में कहा है, वायुयान सेना के कान और आँखें हैं। वर्तमान युद्ध में वायुयान स्काउटों की तरह पता लगाते हैं, अगली पंक्ति की रक्षा करने वाले हैं, अस्त्र और खुराक पहुंचाने वाले हैं, तथा शत्रु सेना के पीछे काम करने वाले होते हैं।

युद्ध के प्रारम्भ में जर्मन वायु सेना संसार में सर्वोत्तम समझी जाती थी। इसकी शक्तिका लोगों ने अनुमान लगाया। अब्द कोष (Year Book) के अनुसार जर्मनी के पास प्रथम पंक्ति के ४००० और कुल १०००० वायुयान थे। अमेरिकन उड़ाका कर्नल लिण्डबर्ग ने जिसने यूरोपीय वायु सेनाओं

का स्वयं निरीक्षण किया था, बतलाया कि जर्मन वायुसेना संसार में सबसे शक्तिशालीनी है और अकेले ब्रिटेन फ्रान्स और इटली की सम्मिलित वायु सेनाओं के बराबर है। ब्रिटेन में गिरफ्तार हुए जर्मन उड़ाकों का कहना है कि जर्मनी के पास १० हजार प्रथम श्रेणी के और ८ हजार द्वितीय श्रेणी के वायुयान हैं। इसके विपरीत ब्रिटेन के पास ४००० वायुयान है और फ्रान्स के पास ३८०० थे। जर्मनी प्रतिमास १००० वायुयान तैयार भी कर सकता है।

समुद्री शक्ति में ग्रेट ब्रिटेन ने अपनी प्रभुता केवल बनाए ही न रखी, साथ ही उसने उन्नति भी की और उसके पीछे पीछे फ्रान्स भी उन्नति की। जर्मनी की समुद्री शक्ति बहुत घट गई। गत युद्ध के समय समुद्री शक्ति में उसका स्थान दूसरा था, इस समय छठवाँ है। किन्तु बाद को मालूम हुआ है कि एक बात में उसकी शक्ति बढ़ी है। वह है व्यापार को नष्ट करने वाले जहाज। गत युद्ध में जर्मन पनडुब्बियों की कारवाइयों से ब्रिटेन के नाकों दम हो गया था। इसी लिए रक्षक जहाजों को साथ रखने की प्रथा काम में लाई गई और इससे ब्रिटेन को बहुत लाभ हुआ। इस युद्धके प्रारम्भ में जर्मनी ने यह सब बातें सोची और अपने उस अनुभव से लाभ उठाया। रक्षक जहाजों के उत्तर में ही जर्मनों ने अपनी नई नौ सेना बनाई है। नवीन अच्छी तोपों से युक्त छोटे क्रूजर रक्षक जहाजों का

सामाना बहुत हद तक कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त महाद्वीप के समुद्री तट पर अपने पनडुब्बियों के अड्डे बनाकर तथा स्थल पर वायुयानों के अड्डे बनाकर, इस युद्धमें गत युद्धकी अपेक्षा जर्मनी ब्रिटेन को अधिक क्षति पहुंचा सकता है। इस सम्बन्ध में एक बात याद रखने योग्य है कि गत युद्धके प्रारम्भ में ब्रिटिश व्यापारिक जहाजरानी जितनी बढ़ी थी, इस बार वह उससे बहुत घट गई थी।

यह कहने कि आवश्यकता नहीं कि ब्रिटिश नौ-सेना में इतनी शक्ति है कि वह जर्मनी के वैदेशिक व्यापार को समाप्त करदे, जैसा उसने गत युद्धमें किया था। ब्रिटेन की तरह जर्मन व्यापारिक जहाजरानी भी बहुत घट गई है और ब्रिटेन की अपार समुद्री शक्ति के कारण जर्मनी के बाहरी व्यापार को नष्ट होते देर न लगेगी।

सातवां अध्याय

—पोलैण्ड पर आक्रमण—

गत महायुद्ध के बाद युद्ध-कला में जो उन्नति हुई थी वह सर्व प्रथम पोलैण्ड पर होने वाले जर्मन आक्रमण में दिखलाई पड़ी। अबीसिनिया और स्पेन में भी उसका कुछ आभास मिला था पर युद्धके सीमित तथा विरोध पक्षके कमजोर होने के कारण उसकी परीक्षा अन्तिम रूपसे न हो सकी थी। किन्तु पोलैण्ड में उसकी परीक्षा अच्छी तरह हो गई और नये ढंगों का पता चल गया।

पोलैण्ड- जर्मनी की सीमा बहुत दूर तक करीब १००० मील की लम्बाई में फैली थी। कोई भौगोलिक या प्राकृतिक सीमा भी नहीं थी जो फौजों को रोकने में सहायता करती। पोलैण्ड को एक असुविधा यह भी थी कि वह तीन ओर उत्तर पश्चिम और दक्षिण से शत्रु की सेनाओं से घिरा था। वर्ष के प्रारम्भ में जर्मनी ने स्लोवाकिया पर कब्जा कर लिया था जिससे उसकी सीमा से पोलैण्ड के प्रधान उद्योग धन्धे वाले प्रान्त पर दक्षिण से हमला करना सम्भव हो गया था। पूर्वी प्रशा से वारसा पर उत्तर की ओर से हमला करना भी इसी तरह आसान हो गया था।

पहली सितम्बर सन् १९३९ के तड़के पोलैण्ड पर जर्मन आक्रमण शुरू हुआ। जर्मन सेना चार भागों में विभक्त होकर एक ही समय हमला किया। हमले के प्रधान क्षेत्र ये थे (१) पोलैण्ड का समुद्र से सम्बन्ध विच्छिन्न करने के लिये पूर्वी प्रशा और पोमिरेनिया (पूर्वी जर्मनी) से गलियारे (कारिडर) पर हमला। (२ पूर्वी प्रशा से दक्षिण में वारसा की ओर बढ़ाव। (३) मध्य पश्चिमी जर्मनी से लाज नगर होते हुए वारसा की ओर बढ़ाव। (४) साइलेसिया और स्लोवाकिया से जेस्टोचोवा-क्रैको के कोयले और लोहे की खानों पर आक्रमण।

पोलैण्ड में जिस युद्ध-नीति का प्रयोग हुआ वह अब सर्वजन विदित हो गया है। पहले आकाश से बमों की वर्षा की गई। फिर दूर तक फैले टंकों के बड़े बड़े दस्ते पोलों को दबाते हुए तेजी से आगे बढ़े, उनके पीछे ही लारियों में सवार अगली पंक्ति की रक्षक सेनायें बढ़ीं। उधर जर्मन वायुयानों ने पोलिश सेना के पीछे रेलवे स्टेशनों, लाइनों आदि को नष्ट करके उनकी सेनाओं में रसद और सामग्री का पहुंचना बन्द कर दिया। समूचे बढ़ाव की सब से बड़ी विशेषता यह थी कि वायुमान-सेना, टैंक-दस्ते और जर्मन फौजों में पूर्ण सहयोग बना रहा। आधे घंटे के भीतर ही तीन जर्मन सेनाऐं पोलिश सीमा के भीतर घुस गईं। पहले पोलों ने पूर्वी प्रशा और पश्चिमी जर्मनी की सेनाओं का सामना दृढ़ता से किया किन्तु दक्षिण में तो जर्मन सेना तैजी से आगे

बढ़ने में समर्थ हुई। केवल ७२ घंटों में ही क्रैकाओ, कैटोवाइस और जेस्टोचोवा के धनी व्यवसायी नगरों पर जर्मन कब्जा हो गया।

इधर भारी जर्मन दस्ते पश्चिम से पोमेरेनिया होकर तमाम पोलिश सेनाओं को हराते हुए उस स्थल तक पहुंच गये जहाँ से तोपों द्वारा पोलिश राजधानी वारसा पर गोलावारी हो सकती थी। उत्तर में जल-सेना तथा वायुसेना ने डांजिग बन्दरगाह पर वेस्टप्लेट के सैनिक अड्डे को घेर लिया। ६ दिन तक वीरता के साथ शामना करने के बाद ७ सितम्बर को वेस्टप्लेट और पक दोनों महत्व के बन्दरगाह जर्मन कब्जे में चले गये।

६ सितम्बर से वारसा के लिये भयंकर युद्ध शुरू हुआ। वारसा चारों ओर से घिर गया था, उस पर लगातार बम वर्षा तथा भीषण गोलावारी होती रही, फिर भी पोलीश सेना ने १५ दिन तक दृढ़ता के साथ उसकी रक्षा की। इस बीच शेष पोलीश सेना या तो नष्ट हो गई या बिखर गई। एक ओर जर्मनी का बढ़ाव जारी था, दूसरी ओर रूस सैन्य-संघटन में लगा था। फिर १७ सितम्बर को एकाएक युद्ध की घोषणा किये या चेतावनी दिये विना ही रूस की भारी सेना ५०० मील की सीमा से पोलैण्ड पर चढ़ दौड़ी। यह सीमा उत्तर में लटेविया और दक्षिण में रूमानिया तक फैली थी।

हमला करने के एक दिन पहले, रात में रूसी परराष्ट्र मंत्री तथा कौंसिल के अध्यक्ष मालोटोव ने मास्को-स्थित पोलिश राजदूत को बुलवा कर हमले की सूचना देदी। ४ बजे सवेरे रूसी सेनाओं ने पोलैण्ड पर हमला किया और ८ बजे सवेरे मालोटोव ने रेडियो द्वारा रूसी आक्रमण का कारण यह बतलाया कि पोलिश राष्ट्र और सरकार अब समाप्त हो चुकी है इसीलिये यह हमला हुआ है।

पश्चिम से भयंकर जर्मन आक्रमण तथा पूर्व से रूसी आक्रमण से भयभीत होकर पोलिश राष्ट्रपति इगनाज मोसिकी ने अपनी सरकार तथा राजनीतिक अधिकारियों के साथ पोलैण्ड छोड़कर १७ सितम्बर को साढ़े सात बजे सवेरे रूमानिया में प्रवेश किये। कई हजार पोलिश सेनाएँ और शरणार्थी, बहुत सी तोपें और टैंको के साथ, रूमानिया में चले गये। करीब १०० पोलिश वायुयान भी रूमानिया में उतरे। किन्तु सबके सब गिरफ्तार कर लिये गये।

उत्तर में ब्रेस्ट-लिटोस्क पर १७ सितम्बर को जर्मन कब्जा होगया। १९ ता० को पोलिश सैनिक और नागरिक शरणार्थियों ने लिथुआनिया में शरण लिया।

पोलों ने सोचा था कि एक माह बाद पश्चिम पोलैण्ड के एक तिहाई समतल भूमि वाले देश को छोड़ दिया जायगा क्योंकि उसकी रक्षा करना कठिन काम है, और फिर विश्चुला

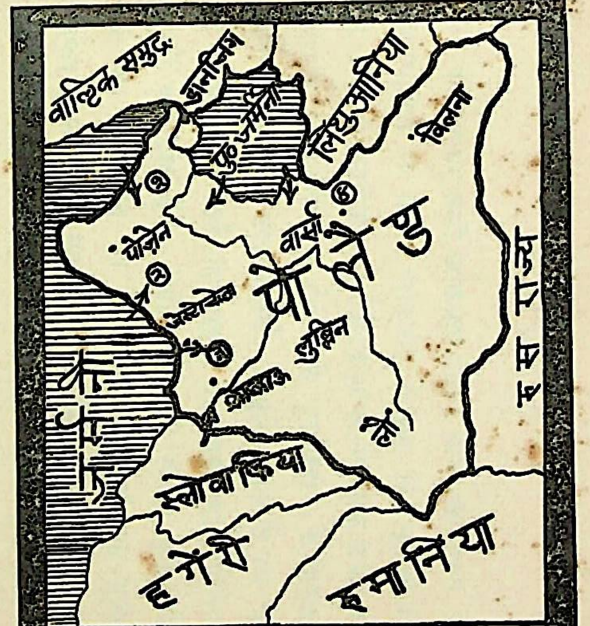
नदी के मोर्चे के पीछे से जवाबी हमला किया जायगा। किन्तु जर्मन के स्लोवाकिया पर कब्जा होने तथा कारपेथियन मार्ग का निर्माण करने के कारण दक्षिण में भी एक मोर्चा तैयार होगया। जर्मन यंत्रारूढ़ दस्तों ने उत्तर और दक्षिण से बढ़कर बमवर्षक वायुयानों की सहायता से बुद्धिमानी के साथ विश्चुला नदी के मोर्चे पर कब्जा कर लिया। ग्रीष्म ऋतु होने के कारण पोलिश सड़के कड़ी थीं और जर्मन टंकों तथा सैनिक मोटरों का गमनागमन आसान होगया था। इनका बढ़ाव १५ दिनों मे इतना अधिक था जितना इतिहास के किसी युद्ध में नहीं हुआ। यदि सितम्बर के अन्तिम भाग में वर्षा के कारण ज्यादा दलदल हो जाता तो इनका बढ़ाव न हो सकता था। पोलों की प्रधान सेना प्रथम पखवारे में नष्ट नहीं हुई थी, और इस समय वह केवल एक ही मोर्चे की रक्षा कर सकती थी और वह भी तब, जब कि वर्षा तुरन्त होती। किन्तु पोलो का यह आशा-दीप भी बुझ गया, जब रूस ने पूर्व से आक्रमण कर दिया। वे दोनों ओर से फँस गये।

सामरिक दृष्टि से युद्ध के प्रथम पखवारे की सबसे दिलचस्प और महत्व पूर्ण घटना जर्मन टैंको और यंत्रीय मोटरों के दस्तों का लारियों में सवार पैदल सेनाओं के साथ पोलैण्ड को रोंद डालना ही था। पोलैण्ड में ५० मील प्रति घंटा चलने वाली मशीनों को चारों ओर से मदद मिली;

वे घुड़सवार सेना से भी अधिक गति से सुस्त पोलिश सेना को पीछे ढकेलती हुई यातायात विछिन्न दुर्दशा ग्रस्त पोलिश सेना को हटाती हुई आगे बढ़ती गई।

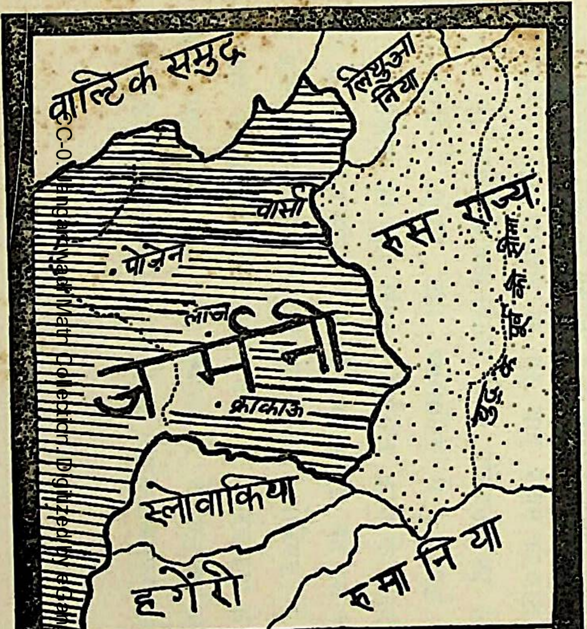
इस विद्युत् युद्ध में विजय से जर्मनी को पोलैण्ड के सब साधन तो प्राप्त हो ही गये, साथ ही उसका रूस और रूमानिया से उनकी सामग्री प्राप्त करने के लिये सीधा सम्बन्ध स्थापित हो गया और दो मोर्चे पर युद्ध करने का भय भी मिट गया।

और पोलैण्ड के इस संकट-काल में उसके मित्र ब्रिटेन और फ्रान्स क्या कर रहे थे? पश्चिमी मोर्चे पर जर्मनी को फँसाये रखने के अतिरिक्त उन्होंने एक तरह से और कुछ भी नहीं किया। पोलैण्ड की भौगोलिक स्थिति ऐसी थी कि सीधे सहायता पहुँचना असम्भव सा था। जर्मनी के पश्चिम से उस पर हमले करके पोलैण्ड को सहायता प्रदान करने के विषय में फ्रान्स की कोई दिलचस्पी नहीं थी। प्रथमतः उसे सीगफ्रीड दुर्ग पाँत से बहुत भय था। दूसरे उसे पूरा विश्वास था कि जर्मनी के सब हमले मैजिनो दुर्ग पाँत के कारण बेकार हो जायँगे और इस तरह जर्मनी थक जायगा। इसी दुर्ग पाँत के भरोसे फ्रान्स की युद्ध नीति यही रह गयी थी कि आत्मरक्षात्मक युद्ध लड़ा जाय। यह नीति उस महान नायक मार्शल फोश की नीति के विपरीत थी जो सदैव आक्रमण की नीति में ही विश्वास रखता था।



—पोलैण्ड पर आक्रमण—

(१)



पोलैण्ड का बटवारा

(२)

पोलैण्ड पर रूसी आक्रमण यद्यपि अचानक हुआ पर वह अप्रत्याशित न था। आक्रमण के कुछ दिन पूर्व से ही रूस के सरकार-नियन्त्रित पत्र पोलैण्ड के अल्पसंख्यक सफेद रूसियों और यूक्रेनियनो के साथ होने वाले दुर्व्यवहार के विरुद्ध शोर मचाने लगे थे। उदाहरणार्थ, कम्युनिस्ट दल के पत्र 'प्रवादा' ने आक्रमण के कई दिन पहले ही लिखा था, 'पोलैण्ड कई राष्ट्रों का देश है। वहाँ पोलों की संख्या कुल आबादी की ६० प्रति शत ही है। शेष अल्प संख्यक यूक्रेनियन, सफेद रूसी और यहूदी हैं। पोलैण्ड के जमीदार उनके साथ बर्बर और अमानुसिक व्यवहार करते हैं'।

रूस और जर्मनी के बीच पोलैण्ड का जो बँटवारा हुआ उसके अनुसार रूस को मुख्यतः रूसी अल्प संख्यकों वाले प्रदेश ही मिले। इस सम्बन्ध में यह याद रखने की बात है कि वार्सेई की सन्धि के फल स्वरूप जिस पोलैण्ड का निर्माण हुआ उसमें ये प्रदेश नही सम्मिलित थे। लार्ड कर्जन ने, जो पोलैण्ड की पूर्वी सीमा निर्धारित करने के लिए भेजे गये थे, जो कर्जन सीमा नाम की सीमा बनाई वह इस बटवारे के बाद की सीमा से मिलती जुलती थी। पोलैण्ड ने अपने पड़ोसी से बलपूर्वक सामरिक ढंग की कार्रवाइयों से ही ये प्रदेश प्राप्त किये थे। जब जर्मनी ने चेकोस्लोवाकिया पर कब्जा किया उस समय पौलैण्ड ने भी चेकोस्लोवाकिया के कुछ

भाग पर अधिकार कर लिया। विलना नगर को भी हथियार के वल से पोलैण्ड ने लिथुआनिया से छीना था। अब रूस ने यह नगर लिथुआनिया को लौटा दिया है।

आश्चर्य की वात तो यह है कि पोलैण्ड पर रूस के आक्रमण से रूस तथा ब्रिटेन-फ्रान्स के बीच झगड़े का सूत्रपात नहीं हुआ। शायद ब्रिटेन-फ्रान्स को यह आशा थी कि पोलैण्ड के बटवारे के सम्बन्ध में रूस और जर्मनी में झगड़ा उत्पन्न हो जायगा। पर उनकी यह आशा व्यर्थ हुई। बँटवारा अत्यन्त शान्ति के साथ बाकायदे हो गया। केवल एक बात से मित्रराष्ट्रों को प्रसन्नता हुई। वह बात यह थी कि रूसी सीमा के कारण जर्मनी का बालकन देशों के साथ सीधा सम्बन्ध स्थापित न हो सका।

बाद में तो ब्रिटेन ने पोलैण्ड के सन्बन्ध में रूसी नीति का समर्थन भी किया। तत्कालीन ब्रिटिश प्रधानमंत्री श्री चेम्बर-लेन ने २६ अक्तूबर को पार्लमेण्ट में वक्तव्य देते हुए कहा कि रूस की आत्मरक्षा के लिए पोलैण्ड पर आक्रमण करना जरूरी था।

पोलैण्ड के युद्ध की दुःख जनक अध्याय अब समाप्त करना ही ठीक है। यद्यपि अधिकांश पोलिश सेना नष्ट हो गई, बहुत से पोलिश नगर जर्मनों के हाथ में पड़ गये, पूर्व में रूसने आक्रमण कर दिया, फिर भी वारसा पर घेरा पड़ जाने के बाद

पोल वीरता से लड़े। ७ सितम्बर को घेरा पड़ा, ९ सितम्बर को जर्मन फील्डमार्शल गोयरिंग ने घोषणा की कि पोलैण्ड का मामला इसी हफ्ते में समाप्त कर दिया जायगा। १० सितम्बर को वारसा रेडियो से घोषणा हुई कि यद्यपि वारसा पर लगातार बम वर्षा हो रही है पर पोल आत्मसमर्पण नहीं करेंगे।

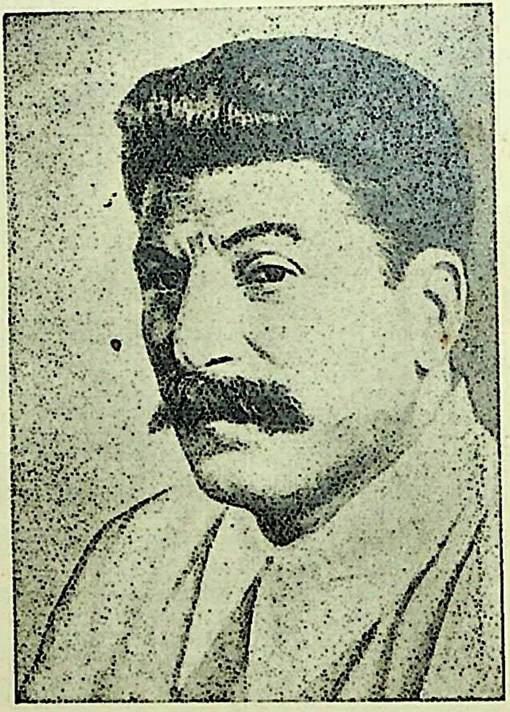
१६ सितम्बर को सवेरे जर्मन सेनाध्यक्ष कर्नल जेनरल फान फ्रिश ने वारसा नगर को समर्पण कर देने की माँग पेश की। परन्तु पोलिश सेनापति ने साफ इन्कार कर दिया। १९ सितम्बर के बाद वारसा तोपों के गोलों और विमानों के बमों से निर्दयता पूर्वक नष्ट किया जाने लगा। लगातारा बमवर्षा के कारण नगर खँडहर हो गया। अन्त में ३ सप्ताह तक अत्यन्त वीरतापूर्वक सामना करने के बाद पोलिश सेनापति ने २८ सितम्बर को आत्मसमर्पण करने का हुक्म दे दिया। किन्तु इस बीच पोलों ने भी जर्मनों को अपार क्षति पहुंचाई। जर्मन सेनाध्यक्ष जेनरल फ्रिश भी यहीं मारे गये।

रूसी सेनाएँ १७ सितम्बर को पोलिश सीमा में घुसीं और उसके बाद वे लगातार पश्चिम में आगे बढ़ती गईं। जर्मन सेनाएँ उन्हें पहले पहल १८ सितम्बर को ब्रेस्टलिटोवस्क में मिलीं। रूसी और जर्मन सेनापतियों में मित्रतापूर्वक बात चीत हुई। २२ सितम्बर तक रूसी सेनाएँ उस सीमा तक पहुंच गई जहाँ तक का प्रदेश रूस को मिलने वाला था। इस

अधिकृत प्रदेश के शहरों और गाँवों में काम चलाऊँ सोवियट-संघ कायम कर दिये गये। २१ सितम्बर को एक जर्मन प्रतिनिधि-मण्डल पोलैण्ड में रूसी-जर्मन सीमा निर्धारित करने के सम्बन्ध में मास्को पहुंचा। दूसरे ही दिन सीमा निर्धारित होगई और २३ सितम्बर को रूसी सेना उस सीमा पर पहुंच गई। ४ अक्तूबर को तत्सम्बन्धी एक सन्धिपत्र पर हस्ताक्षर भी हो गया। वग, विश्चुला और सान नदियाँ ही सीमा बनीं। रूस-अधिकृत प्रदेश में रूसियों की ही प्रधानता थी। इन प्रदेशों के रूस के हाथ में पड़ जाने से जर्मनी का रूमानिया और काले सागर से सीधा सम्बन्ध न स्थापित हो सका।

पोलिश सेना की वीरता पोलैण्ड वालों के लिये सदैव एक गर्व की वस्तु रहेगी।

यद्यपि पोलिश सेना नष्ट भ्रष्ट और तितरवितर हो गई, फिर भी उसकी छोटी छोटी टुकड़ियाँ तब तक गुरिला-युद्ध करती रहीं जब तक उनकी युद्ध सामग्री समाप्त न हो गई। हिटलर ने उनका साहस स्वीकार किया और उनकी प्रसंशा की। १९ सितम्बर को डांजिग में एक भाषण करते हुए हिटलर ने कहा :—मैं आप से यह बात छिपाना नहीं चाहता कि पोलिश सेनाओं ने वीरता के साथ युद्ध किया है। यह कहा जा सकता है कि पोलिश सेना के छोटे अफसर बड़े ही वीर थे, मध्य श्रेणी के अफसर बुद्धिमान नहीं थे और सर्वोच्च सैनिक अफसर तो मूर्ख ही थे।



स्टेलिन

आठवां अध्याय

—रूसी बढ़ाव—

रूसी-जर्मन सन्धि में कौन कौन शर्तें हैं, यह अब भी सही सही और पूर्ण रूप से ज्ञात नहीं है। या तो उस सन्धि की शर्तों के अनुसार या इस युद्ध में जर्मन फंसे रहने के कारण, युद्ध प्रारम्भ होने के बाद रूस पर्याप्त लाभ में रहा है। पोलैण्ड के बँटवारे के कारण उसे ढ़ाई लाख वर्गमील क्षेत्रफल के प्रदेश प्राप्त हुए जो अत्यन्त उपजाऊ और जिनकी आबादी १ करोड़ १० लाख है।

इसके कुछ ही दिन बाद रूस और इस्टोनिया में सन्धि की बातचीत होने लगी। २८ सितम्बर को रूस और इस्टोनिया में परस्पर सहायता की सन्धि हो गई। उसके अनुसार इस्टोनिया पर सैनिक, समुद्री, और वायुयान सम्बन्धी मामलों में रूसका निमंत्रण हो गया।

अतःपर लटेविया की बारी आयी। इस्टोनिया की भांति उसे भी रूसकी उसी तरह की गई शर्तें स्वीकार करनी पड़ीं। ५ अक्तूबर को सन्धिपत्र पर हस्ताक्षर हो गये। दूसरे ही दिन रूस और लिथुआनिया के बीच भी एक सन्धि हुई जिसके अनुसार लिथुआनिया में रूसको सब प्रकार की

सैनिक, समुद्री और विमान सम्बन्धी सुविधाएँ मिली तथा रूस को जर्मन-लिथुआनियन सीमा पर एक दुर्ग पाँत बनाने का भी अधिकार मिला। इन तीनों देशों से जर्मन अल्पसंख्यक तुरन्त हटा लिये गये। फिनलैण्ड के दक्षिण में सब महत्वपूर्ण अड्डों पर कब्जा करने के बाद रूसका ध्यान फिनलैण्ड की ओर गया।

रूसके पश्चिम में फिनलैण्ड स्थित है। पहले ज़ार के समय में यह रूसी साम्राज्य का ही एक अंग था। गत महायुद्ध के बाद भी फिनलैण्ड रूसमें ही था। स्टैलिन राष्ट्रीय स्वायत्त शासन सम्बन्धी सिद्धान्तों का जन्म दिया जिन्हें कम्युनिष्ट दल ने स्वीकार कर लिया। इससे लाभ उठाते हुए फिनलैण्ड रूस से अलग राष्ट्र होने का दावा किया और लेनिन ने इसे स्वीकार कर लिया।

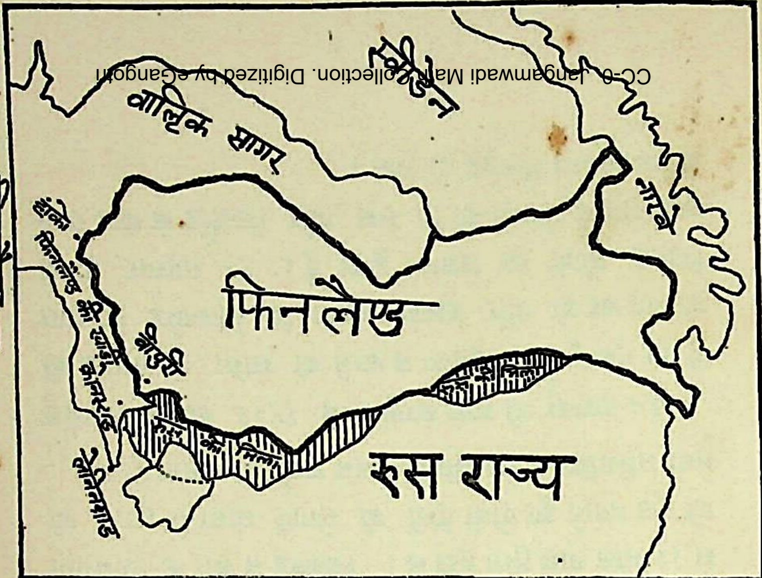
सामरिक दृष्टि से रूसके लिए फिनलैंड का महत्व बहुत अधिक था। यूरोपीय रूस पर कोई भी साम्राज्यवादी देश कालासागर, वाल्टिकसागर और फ़िनलैंड, इन तीन रास्तों से आक्रमण कर सकता है।

गत युद्धके अन्तिम भाग में ब्रिटेन-फ्रान्स ने वोल्शेविक रूस के विरुद्ध होने वाली कई कार्रवाइयों में मदद और प्रोत्साहन दिया, पर वे सब असफल हुईं। उस समय लन्दन के टाइम्स पत्र ने राय दी थी कि रूस पर फिनलैंड होकर सीधे आक्रमण किया जाय।

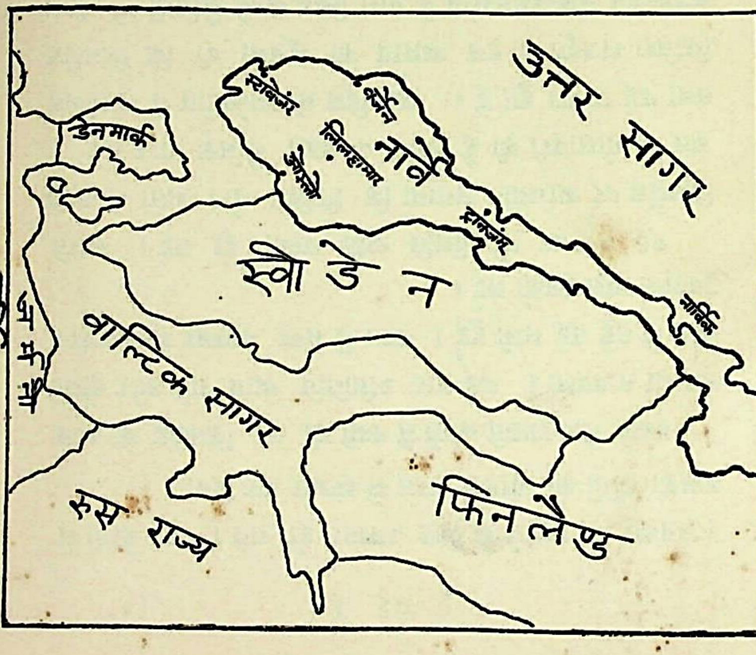
आर्थिक दृष्टि से फिनलैंड ब्रिटेन और संयुक्तराष्ट्र अमेरिका का पुछल्ला बन गया था। उत्तरी फिनलैंड की खानों में अङ्गरेजों की पूंजी लगी थी। अमेरिका की भी बहुत बड़ी पूंजी फिनलैंड के कई उद्योग धन्धों में लगी थी। फिनलैंड का झुकाव भी बिलकुल कम्युनिस्ट-विरोधी था। फिनिश सेना के अध्यक्ष मार्शल मैनरहाइम फिनलैंड के निवासी नहीं बल्कि रूसकी जारशाही के जमाने के एक सैनिक अफसर थे और रूसी-क्रान्ति के समय रूस छोड़ कर भाग आये थे। अतः यदि वे बोल्शेविक रूस के इतने बड़े शत्रु थे तो इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं है।

तीन बाल्टिक देशों को रूस के चंगुल में फँसते देखकर फिनलैंड बहुत डर गया था। ७ अक्तूबर को रूसने फिनलैंड को अपनी राजनीतिक और आर्थिक विषयों पर बातचीत करने के लिए प्रतिनिधि मस्को भेजने के लिए निमंत्रित किया। फिनलैंड घबरा गया और नारवे, स्वीडेन, ब्रिटेन और अमेरिका से इस सम्बन्ध में बातें करने लगा। ब्रिटेन-फ्रान्स ने हर प्रकार की सहायता करने का वादा किया। स्वीडेन-नारवे ने उस हद तक सहायता देने का वादा किया जहाँ तक उनकी तटस्थता नहीं भंग होती। अमेरिका ने भी अर्थिक, नैतिक तथा युद्ध-सामग्री के मदद देने का वचन दिया। इतने वादे पाकर फिनलैंड ने रूस का सामना करने का निश्चय किया। एक ओर तो वह अपने

प्रतिनिधियों को मास्को भेजने में देरी करने लगा, दूसरी ओर अपनी रिजर्व सेना बुलाकर रूसकी सीमा पर सैन्य-संघठन करने लगा। १२ अक्तूबर को अमेरिकन सरकार ने रूस को चेतावनी दी कि वह ऐसा कोई काम न करे जिस से फिनलैंड के साथ उसका झगड़ा हो और शान्ति भंग हो। उसी दिन फिनिश प्रधान मंत्री डा० जुट्टे पासिविकी प्रतिनिधि के रूप में मास्को पहुंचे। रूस की माँग ये थीं कि लाज झील और लेनिनग्रेड के पश्चिम का प्रदेश रूस को मिले, हैंको द्वीप और उत्तर में पेटसामो आदि बन्दरगाहों के पास की जमीन को फिनलैंड रूसको ३० वर्ष के लिए पट्टे पर दे दे। इसके वदले रूसने सोने के रूपमें काफी मुआवजा देने का वादा किया और मध्य फिनलैंड के पूर्व में काफ़ि जमीन दे देने को तैय्यार हुआ। फ़िनलैंड की राजधानी हेलसिंकी में लैाट कर फिनिश प्रधान मंत्रो ने डेनमार्क, स्वीडन और नारवे के सम्राटों तथा फिनिश राष्ट्रपति का एक सम्मेलन किया। राष्ट्रपति रूजवेल्ट ने भी उस सम्मेलन के लिए एक सन्देशा भेजा। उस सम्मेलन में क्या निश्चय हुआ यह तो ज्ञात नहीं है, पर उसके बाद फिनलैंड का रूख और कड़ा हो गया। इस पर रूसने अपनी माँगों में सुधार करके उन्हें नरम कर दिया। २९ और ३१ अक्तूबर को फिनिश मंत्रिमंडल की बैठक में उन माँगों पर विचार हुआ और डा० पासविकी और फिनिश पर-राष्ट्र मंत्री श्री टैनर


स्वीडेन
बाल्टिक सागर
नारवे
फिनलैण्ड
हांगो
फिनलैण्ड की खाड़ी
वीपुरी
लेनिनग्राड
रूस राज्य

— फिनलैण्ड —


उत्तर सागर
स्टावेंजर
बर्गेन
नार्वे
लिलहामर
ओस्लो
डेनमार्क
नार्विक
स्वीडेन
जर्मनी
बाल्टिक सागर
रूस राज्य
फिनलैण्ड

— नार्वे —

१ नवम्बर को मास्को के लिए रवाना हो गये। उन लोगों ने रूसकी माँगों को स्वीकार करने से इन्कार कर दिया।

रूसने फिर अपनी माँगों में कमी की पर फिनलैंड का रूख तब भी न बदला। कई बार प्रतिनिधि आये गये और दोनों ओर से नई नई मांगे हुईं। अन्त में मध्य नवम्बर में बातचीत पूर्णतया असफल हो गईं।

२६ नवम्बर को स्थिति अति गम्भीर हो गई। रूसने फिनलैंड पर अभियोग लगाया कि फिनिश तोप खानों ने रूसी क्षेत्र पर गोलाबारी की है और ८ रूसी सैनिक मारे गये हैं तथा कई घायल हुए हैं। उसी दिन श्री मालोटोव ने रूसस्थित फिनिश राजदूत को इस आशय की सूचना दी कि फिनलैंड करेलियन जल-डमरूमध्य के पास स्थित अपने सैनिकों को सीमा से १५ मील पीछे तुरत हटा ले। फिनलैंड ने रूस के अभियोग को झूठ बताते हुए दोनों देशों की सेनाएँ सीमा से हटाने की तथा सम्मिलित जाँच-समिति कायम करने की सलाह दी।

२८ नवम्बर को रूसी सरकार ने १९३१ की रूस-फिनलैंड में हुई एक दूसरे पर हमला न करने की सन्धि की समाप्ति की घोषणा कर दी और कारण बताया कि लेनिनग्रेड के पास फिनिश फौजों का जमघट हुआ है। २९ नवम्बर को श्री मालोटोव ने घोषणा की कि रूस और फिनलैंड के बीच राज-नैतिक-सम्बन्ध विच्छेद हो गया।

रूस की चेतावनी का फिनलैंड ने उत्तर देते हुए उसके अभियोग को फिर अस्वीकार किया और फिनिश सैनिकों को सीमा से हटाने के सम्बन्ध में बातचीत करने की इच्छा प्रकट की।

३० नवम्बर को सवेरे ९ बजे रूसी बमवर्षक विमानों ने हेलसिंकी तथा अन्य फिनिश नगरों पर हमला किया। फिनलैंड की खाड़ी में स्थित सिसकारी और करेलिय जल-डमरूमध्य के पास स्थित तेरीजोकी बन्दरगाहों पर रूस का कब्जा हो गया। हैंको के किले पर रूसी युद्ध पोतों ने गोलाबरी की। उत्तर में पेटसामों पर भी रूस के कब्जा हो जाने की खबर मिली।

अमेरिका ने समझौता करने की इच्छा प्रकट की। पर रूस ने अस्वीकार कर दिया। १ दिसम्बर को फिनिश मंत्रि-मंडल ने इस्तीफा दे दिया और दूसरा राष्ट्रीय मंत्रिमंडल बना। इसी बीच तेरीजोकी में अन्तर्राष्ट्रीय कम्युनिस्ट दल के भूतपूर्व मंत्री तथा फिनिश कम्युनिस्टों के नेता श्री अटो कुसनिन ने फिनिश प्रजा का मंत्रिमंडल बनाया। इस मंत्रिमंडल ने रूसी लालसेना को फिनिश प्रजातंत्र की मदद के लिए निमंत्रित किया। २ दिसम्बर को मास्को रेडियो से खबर सुनाई गयी कि मालोटोव और कुसनिन ने एक सन्धिपत्र पर हस्ताक्षर किया है जिसके अनुसार कुछ प्रदेशों का आदान प्रदान हुआ है, कुछ

अड्डे और हेंको दीप रूस को पट्टे पर मिले हैं तथा फिनलैंड को बदले में सोना मिलेगा।

इसी बीच फिनलैंड के पक्ष में अन्यराष्ट्रों में मुटबन्दी होती रही। नारवे और स्वीडेन हजारों स्वयंसेवकों तथा युद्ध सामग्री से फिनलैंड की मदद कर रहे थे। इङ्गलैंड-फ्रान्स भी ऐसा ही करना चाहते थे पर ये राजनीतिक दावपेच से राष्ट्रसंघ के द्वारा रूस के विरोध में प्रस्ताव पास करा कर कार्य करना चाहते थे।

राष्ट्रसंघ बहुत पहले ही से एक तरह से मरही गया था। अब मुख्यतया अमेरिका जो संघका सदस्य नहीं था, तथा इङ्गलैंड के प्रयत्न से राष्ट्रसंघ की कौंसिल की एक बैठक अचानक ९ दिसम्बर को बुलाई गयी। रूसने यह चाल देख कर उसमें सम्मिलित होने से इन्कार कर दिया। कौंसिल की बैठक हुई जिसमें रूस को आक्रमणकारी घोषित किया गया और सदस्यों तथा गैर-सदस्यों से प्रार्थना की गयी कि वे फिनलैंड को मदद दें। दिसम्बर भर रूसी-फिनिश युद्ध में कभी एक पक्ष की और कभी दूसरे पक्ष की विजय की खबर मिलती रही। ऐसा प्रतीत होता है कि रूस को पहिले उत्तर में सफलता मिली और पेटसामों और राँगें की खानों पर कब्जा करने के बाद रूसी फौजें नारवे की सीमा तक पहुंच गयीं। मध्य फिनलैण्ड में भी रूस को कुछ सफलता प्राप्त हुई किन्तु दक्षिण में मैनरहाइम दुर्गपाँत के समानान्तर जो जर्मन इञ्जिनियरों द्वारा फिनलैण्ड ने

वनवाई थी, रूस आगे न बढ़ सका। साथ ही इंगलैण्ड, अमेरिका, इटली, स्पेन आदि देशों से बहुत बड़ी संख्या में स्वयं सेवक, युद्ध-विमान, और युद्ध सामग्री फिनलैण्ड को मिलने लगी। ऐसा प्रतीत होने लगा कि युद्ध का रुख उलटा हो जायगा। मध्य दिसम्बर से मध्य जनवरी १९४० तक फिनलैण्ड वालों ने अपनी अधिकांश विजित भूमि पर कब्जा कर लिया और रूसियों को कई जगह हराया। परन्तु फिनलैण्ड के साधन अब समाप्त हो रहे थे। हैलसिंकी, आगो, वोर्नो और हैंको आदि बड़े नगरों पर भयंकर बमवर्षा के कारण फिनलैण्ड की युद्ध सामग्री नष्ट होने लगी।

फरवरी १९४० के प्रारम्भ से फिनलैण्ड वाले झुकने लगे। इस समय तक रूसियों ने भी मनोयोग से लड़ना शुरू कर दिया था और अनुभवी सेनायें तथा विश्वस्त अफसर युद्ध क्षेत्र में भेजे गये। पहली फरवरी को रूसियों ने बमवर्षक विमान, शस्त्रास्त्र-सज्जित गाड़ियाँ, टैंको, तथा धुंआ-यंत्रो की सहायता से मैनरहाइम पाँत पर जबर्दस्त हमला शुरू किया। यह एक पूर्ण और संगठित आक्रमण था। रूसी तोपों ने मैनरहाइम दुर्ग पाँत के उस पार गोलावारी शुरू की और रूसी बमवर्षक वायुयान महत्वपूर्ण फिनिश नगरों पर बमवर्षा करने लगे। केवल एक ही दिन में १००० से अधिक बम गिराये गये।

मध्य फरवरी के करीब से फिनिश सेनाएँ पीछे हटने लगीं।

करीब डेढ़ माह बाद उन्हें पता लगा कि उनके सब साधन समाप्त हो चले हैं।

मार्च के प्रारम्भ में ही फिनलैण्ड की सामना करने की शक्ति समाप्त हो गई। १० मार्च १९४० को हेल्सिंकी से यह घोषित किया गया कि स्वीडेन की मध्यस्थता से रूसी और फिनिश सरकारों में इस सम्बन्ध में बात चीत हो रही है कि युद्ध समाप्त होने और शान्ति कायम होने की कोई गुंजायश है या नहीं। और इस कार्य के लिये दिसम्बर को रूस के निमंत्रण पर फिनिश प्रतिनिधि मास्को गये हैं।

१२ मार्च को मास्को से सरकारी तौर पर घोषित किया गया कि रूस फिनलैण्ड में सन्धि हो गई है। १३ मार्च सन्धि की शर्तें घोषित की गयीं। रूस ने प्रारम्भ में जो मांगे पेश की थी, इस सन्धि की शर्तें उनसे बहुत अधिक थीं। फिनलैण्ड के लिये अब और भी अधिक त्याग करने का समय आया। नया सरहद बनाया गया जिसके अनुसार निम्नलिखित प्रदेश रूस को मिले :—

विपुरी नगर के साथ करेलियन जल-डमरूमध्य का पूरा क्षेत्र, विपुरी की पूरी खाड़ी और उसके सब द्वीप, लाज झील के उत्तर और पश्चिम के प्रदेश और उसके नगर, मार्काजर्वी और कुसलाजर्वी के उत्तर का प्रदेश और फिनलैण्ड की खाड़ी के कई द्वीप, हैंको प्रायद्वीप और इस क्षेत्र के सब द्वीप

३० वर्ष के लिये पट्टे पर। रूसने इसके बदले प्रतिवर्ष ८० लाख फिनिश मार्क देना स्वीकार किया। इन द्वीपों में रक्षा के लिये सैनिक तथा समुद्री और हवाई अड्डे बनाने का अधिकार रूस को मिला। रूस शीतोष्ण कटिबन्ध के पेटसाभो से अपनी सेना हटा लेने को राजी हो गया। फिनलैण्ड को केवल अपने छोटे युद्ध पोत रखने की आज्ञा मिली। रूसको पेटसाभो से होकर नारवे मे आने जाने की स्वतंत्रता भी मिली। फिनलैण्ड से होकर स्वीडेन के लिये भी आने जाने की रूस को रास्ता मिला। रूस ने युद्ध का हर्जाना नहीं लिया। दोनों देशों ने एक दूसरे पर हमला न करने तथा दोनों मे से किसी के दुश्मन राष्ट्र से समझौता न करने की प्रतिज्ञा की। सन्धि के अनुसार १३ मार्च १९४० को ११ बजे सवेरे लड़ाई बन्द करने की घोषणा की गई। १६ मार्च को फिनिश सेनाओं का नये सरहद के पीछे हटना शुरू होगया। फिनिश पार्लियामेण्ट की एक गुप्त बैठक में सन्धि का समर्थन ३ के विरूद्ध १४५ वोटों से हो गया।

———

नवां अध्याय

—हवाई और पनडुब्बियों का युद्ध—

जर्मनी को तंग करने के लिए ब्रिटेन के हाथ में सबसे बड़ा अस्त्र आर्थिक अवरोध का था। यद्यपि अवरोध का कार्य धीरे धीरे होता है पर गत महायुद्ध में यह सिद्ध हो चुका था कि यह एक अमोघ अस्त्र है। गत युद्ध की भांति ही विजय की इच्छा से ब्रिटेन ने युद्ध के प्रारम्भ में ही कड़ा अवरोध लागू कर दिया।

यदि जर्मनी के विरुद्ध आर्थिक अवरोध सफल हो सकता है परन्तु ब्रिटेन के विरुद्ध तो वह और भी अधिक सफल हो सकता है क्योंकि लगातार आयात पर ही ब्रिटिश द्वीप का जीवन निर्भर करता है। गत महायुद्ध में जर्मनों का पनडुबी-अवरोध इतना अधिक सफल रहा जिसका असलीयत युद्ध के कुछ दिनों बाद चला। सन् १९१७ में ब्रिटेन में आदमियों और कल-कारखानों के लिए भोज्य पदार्थ और कच्चे माल की कमी अपनी अन्तिम सीमा पर पहुंच गई थी। स्थिति यहाँ तक बिगड़ गई थी कि समुद्री विमान के मंत्री (First Sea Lord) को युद्ध-मंत्रिमण्डल से बार बार विवश होकर कहना पड़ा '१९१८ के युद्ध की बात करना व्यर्थ है। यदि जर्मन पनडुब्बियों को रोकने का कोई उपाय नहीं ढूढ़ा जाता है तो हमारे लिए १९१८ में युद्ध की नौबत

ही नहीं आएगी' । इसी संकट काल में संयुक्त राष्ट्र अमेरिका की जल सेना विभाग के कहने पर रक्षक जहाज पद्धति (convoy system) निकाली गई । इस युद्ध के प्रारम्भ से ही जर्मनी ने पनडुब्बी-युद्ध और ब्रिटेन ने अत्यंत खर्चीली पर कार्यकरी रक्षक-जहाज पद्धति का सहारा लिया ।

इसका परिणाम यह हुआ है कि समुद्री कारंवाइयां बहुत धीरे धीरे और अादृश्य रूप में होती रही जिनकी खबरों पर न तो शोर ही होता है और न सुनने वाले आश्चर्य ही होते हैं । किन्तु यह बहुत ही महत्व पूर्ण युद्ध-पद्धति है जिसके द्वारा योद्धा राष्ट्रों की जीवनी शक्ति पर ही लगातार आघात होता रहता है ।

जैसा पहले कहा गया है, इस युद्ध के प्रारम्भ में ब्रिट्रिश जलसेना गत युद्ध के प्रारम्भ काल की तुलना में कहीं अधिक बढ़कर थी। इसके विपरीत जर्मन जल सेना गत महायुद्ध के प्रारम्भ काल की तुलना मे इस समय बहुत घटकर थी । एक और खास बात यह है कि ब्रिटेन की पनडुब्बी जहाजें में, जो व्यापारी जहाजों को डुबाने के काम में आती है, बहुत उन्नति हुई थी और इसके विपरीत जर्मनी ने इस विषय में अवनति की थी ।

किन्तु हमे वर्तमान युद्ध पर वर्तमान परिस्थितियों को सामने रखकर दृष्टिपात करना है। अभी हाल में सुदूर पूर्व में

अपनी सत्ता के लिए जापान और ब्रिटेन के बीच उत्पन्न हुई प्रतिद्वन्द्विता ने गम्भीर रूप धारण कर लिया है। इस लिए ब्रिटेन को सिंगापुर में 'द्वितीय जिब्राल्टर' का निर्माण करना पड़ा है। ब्रिटेन की बहुत बड़ी जल सेना भी वहाँ स्थायी रूप से रखी गयी है। दूसरी बात अबीसीनिया के युद्ध के बाद भूमध्यसागर में इटली और ब्रिटेन की प्रतिद्वन्द्विता बहुत बढ़ गई है। रोम बार्लिन धुरी की बात सबको मालूम थी। भूमध्यसागर में अपने यातायात को सुरक्षित रखने के लिये ब्रिटेन को माल्टा और सिकन्दरिया में भी अपनी जलसेना का बहुत बड़ा भाग रखना पड़ा है। इस तरह ब्रिटेन की समुद्री शक्ति विस्तृत ब्रिटिश साम्राज्य की रक्षा के लिए संसार भर में फैली हुई है।

ब्रिटेन की दूसरी कमी यह है कि जहाँ उसकी नौ शक्ति में वृद्धि हुई थी वहीं उसके व्यापारिक जहाज शक्ति में काफी कमजोरी आगई थी। सन् १९१४ में संसार के सब समुद्रों में चलने वाले जहाजों के आधे जहाज ब्रिटेन के थे, किन्तु १९३८ में ब्रिटेन के पास एक चौथाई ही रह गये।

ब्रिटेन की समुद्री घेरा का मुकाबला करने की शक्ति एक ओर कम हो गई थी, तो दूसरी ओर जर्मनी की शक्ति बहुत बढ़ गई थी। यह सच है जर्मनी का समुद्री व्यापार समाप्त होता जा रहा है, और बहुत सम्भव है कि ब्रिटिश जल सेना

द्वारा वह पूर्णतः समाप्त कर दिया जाय; किन्तु जहां तक यूरोपीय और एशियाई स्थल-व्यापार का सम्बन्ध है, उसका स्थिति स्पस्टतया सन् १९१४ से अधिक संभली हुई है। गत महायुद्ध में जर्मनी, अपने शत्रु-राष्ट्र रूस, रूमानिया, सर्विया, और इटली से चारों ओर से घिरा था। उस समय उसकी कच्चे माल की व्यवस्था प्रारम्भ में ही निराशापूर्ण थी। यदि समुद्री घेरे पर कड़ाई के साथ ध्यान दिया जाता तो जर्मनी थोड़े ही दिनों मे भूखों मरने लगता। गत युद्ध के चौथे वर्ष में यही हुआ था। इस युद्ध में अब तक रूस की उदार तटस्थता और इटली की अर्द्ध मित्रता के कारण खाद्य सामग्री तथा पेट्रोल आदि युद्ध-सामग्री काफी मात्रा में प्राप्त होती रही।

जैसा पहले कहा जा चुका है, इस युद्धमें जर्मनी की नौ शक्ति का वहुत ह्रास हो गया है। उसकी पनडुब्बी जहाज़ के सम्बन्ध में यह वात विशेष रूप से मालूम होता है। गत युद्ध में उसके पास १११ पनडुब्वियाँ थीं, इस वार केवल ७१ हैं। ये शक्ति में भी कमज़ोर हैं। किन्तु दो चीज़े जर्मनी के पास अच्छी भी हैं—उसकी हवाई युद्धास्त्र और उसकी विशेप रूप से शिक्षित नौ सेना। एक अमेरिकन युद्ध विशेषज्ञ मेजर इलियट ने कहा है, "जर्मनी विशेष रूप से व्यापार नष्ट करने के लिये नौ सेना तैयार कर रहा है। इसके कुछ दस्तों को छोड़

करके शेष नौ सेना अपेक्षाकृत अन्य किसी काम के नहीं हैं। "शार्नहार्स्ट" और "नीज़े नाऊ" नाम के जहाज समुद्री युद्ध में फ्रान्स और ब्रिटेन के भारी युद्धपोतों के सन्मुख लड़ने में बिल्कुल असमर्थ हैं, एक समुद्री लड़ाई में ग्राफ़ जैपिलिन और उसके साथ के एक जहाज़ के पास उस ढंग के एक भी वायुयान नहीं थे जैसे फ्रान्स और ब्रिटेन के नये जहाजों के पास रहते हैं किन्तु ये सब जहाज दुश्मन का जहाज नष्ट करने, रक्षक जहाजों पर हमला करने तथा जर्मनी के समुद्री तट के हवाई अड्डों की मदद करने के लिये सर्वोत्तम है।" (मेजर G. F. इलियट कृत फालकनस् आफ़ सी नामक पुस्तक के चौदहवें पृष्ट से)।

उक्त अमेरिकन विशेषज्ञ के कथन का समर्थन हाल ही प्रकाशित एक पुस्तक से अच्छी तरह हो जाता है। उसके लेखक जर्मन नौ सेनाध्यक्ष ऐडमिरल रीडर हैं, अपनी "क्रूजर" ("Cruiser") नामक पुस्तक में उन्होंने लिखा है कि क्रूज़र का प्रधान कार्य व्यापार नष्ट करना तथा रक्षित जहाज़ों पर आक्रमण करना है।

साधारण पाठकों के लिये समुद्री युद्ध में प्रवृत्ति होने वाले युद्धास्त्रों तथा युद्धपोतों के बारे में कुछ शब्द कहना जरूरी है। सबसे महत्व पूर्ण जहाज़ युद्धपोत (Battle ships) होते हैं। ये एक तरह से विमान वेधी तोपों तथा अन्य युद्धास्त्रों

से युक्त बड़े बड़े तैरते हुये किले ही होते हैं। दूसरी तरह के जहाज क्रूजर (Cruiser) कहलाते हैं। ये युद्धपोतों से कम मजबूत होते हैं। कुछ क्रूजरों से बिमान ढोने का काम लिया जाता है। गत महायुद्ध के बाद ये विमान-पोत वाही क्रूजर जहाज़ का आविर्भाव हुआ है। इन पर से विमान पोत उड़ जा सकते हैं और लैाटकर आश्रय ले सकते हैं। तीसरे तरह के जहाज विध्वन्सक (Destroyer) पोत कहलाते हैं। ये क्रूजरों से छोटे होते हैं किन्तु इनकी चाल अधिक तेज़ होती है और इनमें टारपीडो भी होते हैं जो जहाज़ों में पानी के नीचे से छेदकर देते हैं। वर्तमान युद्ध में विध्वंसक पोत अत्यन्त महत्व पूर्ण कार्य कर रहे हैं। इनकी चाल बहुत तेज़ होती है और भारी तोपों से युक्त होकर वे स्कांउटिंग का कार्य करते हैं तथा रक्षक जहाजों के आगे आगे चलते और दुश्मन के पनडूब्बियों तथा जहाजों पर टारपीडो का वार करते हैं। इसके बाद पनडूब्बियों का नम्बर है जो व्यापार नष्ट करने के लिये सबसे बड़ा साधन है। ये पानी में डूब जाती है और पानी के भीतर से ही टारपीडो का वार करके असावधान युद्धपोतों और व्यापारी जहाजों को नष्ट कर देती हैं।

समुद्री लड़ाई में सुरगों का भी बहुत महत्व पूर्ण स्थान है। ये पानी की सतह के नीचे तैरते हुए एक तरह के बम होते हैं;

जब जहाज इनके ऊपर से होकर चलते हैं तो ये अपने आप फट कर जहाज़ को नष्ट कर देते हैं।

वर्तमान युद्ध में जर्मन "इ-बोट्" नाम के एक नये तरह के जहाज़ का इस्तेमाल कर रहे हैं; ये एक तरह के तेज़ चलने वाले मोटर नौकायें होती हैं जो हमला कर तुरन्त छिप जाते हैं। इंगलिश चैनेल में इनका बहुत प्रयोग हुआ है किन्तु विस्तृत सागर में इनका कोई महत्व नहीं है।

इन बातों का वर्णन करने के बाद हम इस वर्तमान समुद्री युद्धके बारे में कहना चाहते हैं। पहले ही हम यह कह देना चाहते हैं कि समुन्द्री युद्ध की बहुत कम सच खबरें मिलती हैं। युद्ध करने वाले दोनों दलों की ओर से बढ़ा चढ़ा कर अपनी ही विजय की बात कही जाता है और कोई तीसरा वहाँ नहीं रहता है कि असली बात बतावे। हम केवल कुछ सर्व जन विदित लड़ाईयों के बारे में लिखेंगे।

जब कि लड़ाई शुरू हुई तब संसार के दो बड़े यात्री जहाज़ "क्वीन मेरी" जो इंगलैण्ड का है और जो संसार का सबसे बड़ा और तेज़ चलने वाला जहाज़ है और "नारमेण्डी" जो फ्रान्स का है और जिसका नम्बर "क्वीन मेरी" के बाद दूसरा है समुन्द्र में थे। लौट कर अपने देश में वापस जाना उनके लिये खतरे की बात थी इसलिये उन्होंने न्यूयार्क में शरण लिया और अब भी वे वहीं पर बधे पड़े हैं। ब्रिटेन के युद्ध घोषणा

करने के दिन (३ सितम्बर सन् १९३९ ई०) "एथिनिया" नाम का ब्रिटिश जहाज़ डुबा दिया गया, जिसकी पूरी घटना अब भी नहीं मालूम है। उस पर बहुत से अमेरिकन यात्री भी थे। दूसरे ही दिन "एजास्क" नामके ब्रिटिश क्रूजर ने गेहूं से लदे "आलिन्डा" नाम के जर्मन जहाज को दक्षिणी अमेरिका में मान्टीविडियो के पास डुबा दिया। उसके बाद थोड़े दिनों में ही कुछ और ब्रिटिश जहाज डुबाये गये। युद्धके प्रथम सप्ताह में ही २१ ब्रिटिश जहाज जिनका बोझ १ लाख टन था डुबाये गये।

८ सितम्बर सन् १९३९ ई० को पहले पहल समुन्द्री लड़ाई में हवाई जहाज का प्रयोग ब्रिटेन द्वारा हुआ। ब्रिटिश विमानों ने सिल्ट द्वीप के एक सुदृढ़ जर्मन हवाई अड्डे पर बम वर्षा की। इसका परिणाम मालूम नहीं हुआ परन्तु ब्रिटेन वालों ने दावा किया कि उन्होंने दुश्मन को बहुत गहरा नुकसान पहुँचाया है। लम्बे युद्ध में यह मालूम हो गया कि ब्रिटिश वायुसेना यद्यपि संख्या में जर्मनों से कम हैं लेकिन योग्यता में वह अत्यन्त बढ़े चढ़े हैं।

१८ सितम्बर को जर्मनों ने एक नवनिर्मित्त शक्ति शाली ब्रिटिश विमान पोत वाही क्रूजर "करेजस" को डुबा दिया, इसमें बहुत से व्यक्तियों की जान गई।

युद्ध के प्रारम्भ होने के समय "ब्रिमेन" नाम का एक प्रथम श्रेणी का जर्मन यात्री जहाज़ समुन्द्र में था। ब्रिटिश नौसेना

उसकी खोज में लग गई। १२ अक्तूबर को यह घोषणा की गई कि उक्त जहाज समुन्द्री घेरे को पार कर रूसी बन्दरगाह मर मान्सक पहुंच गया है। बाद को वह जहाज छिप कर जर्मनी में भाग आया।

१३ अक्तूबर को ब्रिटिश नौसेना ने जर्मनी के तीन पन-डुब्बियों को डुबाकर उसे गहरी क्षति पहुँचाई परन्तु दूसरे ही दिन जर्मनों ने इसका गहरा बदला लिया और एक जर्मन पनडूब्बी ने सुरंगों के बीच से निकल कर तथा ब्रिटिश रक्षकों का आँख बचाकर उत्तरी स्काट्लैण्ड के "स्कापाफ्लों" नाम के ब्रिटिश समुन्द्री अड्डे के भीतर घुस गई और "रायल ओक" नाम के एक लंगर डाले हुए ब्रिटिश युद्ध पोत को डुबा कर निकल भागी।

"करेजस" और "रायलओक" के डुबाये जाने का तरिका पनडुब्बी युद्धमें एक नवीन बात थी। पहले लोगों का यह ख्याल था कि चूंकि टारपिडो का वजन भारी होता है इसलिये एक पनडुब्बी केवल एक ही टारपिडो लेजा सकती है। इसी अधार पर सन् १९३५ ई० में ब्रिटेन और जर्मनी के बीच नौसैनिक सन्धि हुई थी जिसके अनुसार जर्मनी बड़े जहाज केवल सिमित संख्या में बना सकता था किन्तु पनडुब्बी जितना चाहे उतना बना सकता था। ब्रिटिश अधिकारियों को यह विश्वास दिलाया गया था कि उचित रीति से बनाये गये बड़े बड़े जहाजों का पन-

डुब्बियां कुछ भी नुकसान नहीं कर सकती हैं क्योंकि एक पनडुब्बी में केवल एकही टारपिडो होता है। लेकिन दो घटनाओं के सम्बन्ध में यह देखा गया कि पनडुब्बियों में कई टारपिडो रक्खे जा सकते हैं।

इधर जर्मनी ने ब्रिटिश नौसेना पर हवाई आक्रमण करना शुरू कर दिया किन्तु ये आक्रमण प्रारम्भ में उतने जबरदस्त नहीं थे जितना कि मारशल गेरीं ने घोषणा की थी। २२ अक्टूबर तक "सकापाफलो" के समुद्री अड्डे पर चार बार जर्मन हमले हुए जिनका परिणाम अभी ज्ञात नहीं है। जर्मनों का दावा था कि उन्होंने "आइरनड्यूक" नाम के ब्रिटिश युद्धपोत को नुकसान पहुंचाया है। इसके अतिरिक्त एक नाटकीय युद्ध हुआ जिसमें १२ जर्मन विमाने ६ ब्रिटिश युद्धपोतों पर हमला किया। परिणाम से यह ज्ञात होता है कि ब्रिटिश जंगी जहाज अब भी विमानों का भलि भांति सामना कर सकते हैं।

इधर व्यापार का नष्ट होना जारी रहा; अक्तूबर के मध्य तक ब्रिटिश अधिकारियों ने यह स्वीकार किया कि दो जर्मन क्रूजर "डायसलैन्ड" और "ग्राफस्पी" युद्ध प्रारम्भ से ही समुद्र में थे और अधिकतर ब्रिटिश जहाज ये ही नष्ट कीये हैं।

४ नवम्बर को राष्ट्रपति रूजवेल्ट ने यह घोषणा की कि स्पेन के समुन्द्र तट से लेकर नारवे के समुन्द्र तट तक युद्धक्षेत्र

माना जाता है और अमेरिकन जहाज़ और नागरिक उस क्षेत्र में नहीं जा सकते हैं। चूंकि इंगलैण्ड भी इस क्षेत्र में आ जाता था इसलिये वह बड़ी कठिनाई में पड़ गया; उसके पास स्वयं ही जहाज कम थे और जो थे वह भी दुश्मन की कारवाई के कारण रोज़ रोज़ कम होते जाते थे। अब वह अमेरिकन जहाजों का मदद भी नहीं ले सकता था।

दूसरी तरफ जर्मनी ने पनडुब्बियाँ बनाने का कार्य ज़ोरो से शुरू कर दिया था; ८ नवम्बर सन् १९३९ ई० को श्री चर्चिल ने यह स्वीकार की कि जर्मनी में प्रति सप्ताह दो पनडुब्बियाँ तैयार हो रही हैं और जनवरी तक करीब सौ पनडुब्बियाँ तैयार हो जायेगी।

अमेरिकन अधिकारियों द्वारा प्रकाशित एक लेख में दिखलाया गया था कि ३ सितम्बर से लेकर १५ नवम्बर तक कुल ११० जहाज़ टारपीडो, तोप अथवा सुरंगों द्वारा डुबाये गये थे जिसमें ब्रिटेन के ५७ जहाज़ थे जिनका कुल वज़न २ लाख ५८ हज़ार एक सौ अठ्ठासी टन था, फ्रेंच जहाजों की संख्या ७ थी जिनका वजन ४८५९३ टन था और जर्मन जहाज़ों की संख्या ८ थी जिनका वजन ३८८८० टन था और तटस्थ राष्ट्रों की जहाजों की संख्या ३८ थी जिनका कुल वज़न ११४०७६ टन था।

२२ नवम्बर को एक जर्मन पनडुब्बी ने ब्रिटेन के छठे विध्वंसक जहाज़ "जिप्सी" को डुबा दिया और इसके दूसरे ही दिन ९ और ब्रिटिश व्यापारी जहाज़ डुबाये गये। इसी दिन जर्मनी ने पहले पहल चुम्बकीय सुरंगों का प्रयोग शुरू किया। साधारण सुरंगों में एक दोष रहता था। उनका एक बहुत छोटा हिस्सा जो छाते के तरह होता था, पानी के सतह के ऊपर तैरता रहता था। यह हिस्सा सुरंग का पता बता देता था जिससे पहले उसे नष्ट करके तब जहाज आगे बढ़ते थे। किन्तु चुम्बकीय सुरंगे पानी के भीतर डूबी रहती हैं। जब कोई जहाज़ उनके ऊपर से होकर गुज़रता है तो उनका विस्फोट होता है। साधारण सुरंगे पनडुब्बियों या अन्य जहाज़ों द्वारा बिछायी जाती थी किन्तु चुम्बकीय सुरंगे वायुयानों द्वारा भी बिछायी जाती हैं।

२२ नवम्बर की रात में ब्रिटिश तट-रक्षकों को यह देखकर बहुत आश्चर्य हुआ कि कुछ जर्मन विमान समुद्र सतह के पास आकर उड़े और फिर लापता हो गये। टेम्स नदी के मुहाने में ही यह देखा गया। इसके बाद पता चला कि वे विमान चुम्बकीय सुरंगे बिछा रहे थे।

इस सम्बन्ध में यह याद रखने की बात है कि ब्रिटेन वालोँ ने इस नये खतरे का सामना किस प्रकार किया। एक ब्रिटिश वैज्ञानिक डाक्टर गाउज़ ने अपने जान को हथेली

पर लेकर एक चुम्बकीय सुरंग की परीक्षा की और इस प्रकार इनसे वचने के लिए उपाय निकाला।

२५ नवम्बर को जर्मन विमान फिर उत्तरी सागर में ब्रिटिश युद्ध-पोतों पर हमला किया। अभाग्यवश इस लड़ाई के वारे में भी कुछ स्पस्ट ज्ञात नहीं है क्योंकि दोनों ओर से एक दूसरे से बढ़कर दावे किए गये। दूसरे ही दिन ब्रिटिश अधिकृत पोलिस जहाज़ पिलसुस्की (Pilsudski) सुरंग से टकरा कर डूब गया। उसी दिन 'रावलपिण्डी' नामक ब्रिटिश व्यापारिक क्रूज़र "डायशलैण्ड" नामक जर्मन क्रूज़र द्वारा डुवा दिया गया। इसके दूसरे दिन ५ और जहाज़ डूवे।

३ दिसम्बर को ब्रिटेन ने जर्मन समुद्री अड्डों पर आक्रमण करना शुरू कर दिया और तटस्थ देशों के विरोध का कुछ भी न ख्याल करते हुए जर्मनी के आयात और निर्यात का नियंत्रण करने की ज़ोरदार कोशिश शुरू की। दूसरे दिन यह खवर मिली कि जर्मन क्रूजर 'एडमिरल ग्राफस्पी' ने दक्षिणी अटलाण्टिक में 'डोरिक स्टार' नामक एक १००८६ टन वजन के बृटिश जहाज को डुवा दिया। इसके वाद एक हफ्ते के भीतर ही उसी स्थान के आस पास कुछ और ब्रिटिश जहाज डुवाये गये। यह खतरा देखकर ब्रिटेन ने इधर उधर घूमने वाले-क्रूजरों को नष्ट करने की योजना बनायी और ब्रिटिश जलसेना का एक भाग केवल इसी काम के लिए निश्चित कर दिया।

८ दिसम्बर को 'जरसी' नामक नया ब्रिटिश विध्वंसक पोत को जर्मन पनडुब्बी के आक्रमण से नुकसान पहुंचा और तीन और ब्रिटिश व्यापारी जहाज़ डुबा दिये गये। ब्रिटेन ने भी ३ जर्मन पनडुब्बी डुबाने का दावा किया।

१४ दिसम्बर को दक्षिणी अटलाण्टिक में युरुगुवे के तटके पास एक मजेदार समुद्री लड़ाई हुई। ब्रिटिश क्रूजर 'एजाक्स' ने जर्मन पाकेट युद्धपोत 'एडमिरल ग्राफ स्पी' को देखा। सामने धुएँ का बादल खड़ा कर के आड़ से 'एजाक्स' ने सहायता की पुकार की। दो अन्य ब्रिटिश क्रूजर 'एक्जेटर' और 'एचिलिज' तुरन्त उसकी मदद के लिए पहुंचे। ब्रिटिश क्रूजरों ने 'ग्राफस्पी' का पीछा किया और साथ ही लड़ाई भी होती रही। १४ घंटे के भाग-दौड़ वाली लड़ाई के बाद 'ग्राफस्पी' को युरूगुवे में मांटवीडियो की खाड़ी में शरण लेना पड़ा। उसको बहुत नुकसान पहुँचा था और उसके ३६ खलासी मारे गये और ६० घायल हुए। युरूगुवे की सरकार ने 'ग्राफस्पी' के मरम्मत के लिये ७२ घंटे तक बन्दरगाह में ठहरने की आज्ञा दी। इस अवधि के समाप्त होने के बाद १७ दिसम्बर को साढ़े छः बजे ग्राफस्पी समुद्र में उतरा। उसके ६०० खलासी पहले ही दूसरे जहाज़ पर भेज दिये गये थे। ७० मिनट के बाद 'ग्राफस्पी' ने विस्फोट द्वारा अपने को नष्ट कर दिया और कप्तान ने आत्म-हत्या कर ली। ब्रिटिश क्रूजर 'एक्सिटर' को काफी क्षति पहुंची

थी। जर्मनी के तीन युद्धपोतों में से एक के नष्ट हो जाने से उसे काफी धक्का लगा।

इधर अन्य समुद्रों में भी युद्ध ज़ारी रहा। ३ दिसम्बर से मध्य दिसम्बर तक २०१ जहाज जिनका वजन ७८८६६७ टन था डुबाये गये। इसमें अकेले ब्रिटेन के १०४ जहाज़ थे जिनका वज़न ४१६८७० टन था।

दिसम्बर १६ को सिल्ट तथा अन्य छोटे जर्मन द्वीपों के समुद्री अड्डों पर ब्रिटिश वायुयानों ने १० बजे दिन से ३ बजे शाम तक लगातार बमवर्षा की। यह अबतक युद्ध का सबसे बड़ा हमला था। इसमें द्वीप और महाद्वीप को जोड़ने वाले हिण्डेनबर्ग बाँध पर भी बमवर्षा हुई। उसीदिन हेलिगोलैण्ड-बाइट में सबसे बड़ा हवाई युद्ध हुआ जिसमें १२ जर्मन और ७ ब्रिटिश विमान नष्ट हुए।

दिसम्बर के तीसरे सप्ताह में ब्रिटेन पर जर्मनों के छिटफुट हवाई हमले होते रहे। १७ दिसम्बर को उत्तरी समुद्र में जर्मन हवाई युद्ध का नया अध्याय शुरू हुआ और अरक्षित छोटे छोटे जहाज़ों पर मशीनगनों और बमों का वार हुई। ३ दिन में करीब ३५ जहाज़ों पर हमले हुए। कुछ हमलों में ब्रिटिश विमानों ने सामना किया और जर्मनों का पीछा किया।

११ जनवरी को सारे ब्रिटेन पर जर्मन विमानों:के जवाबी हमले हुए। फोर्थ की खाड़ी, न्यूकैसिल, हम्बर की खाड़ी

और टेम्स की खाड़ी के ऊपर हवाई युद्ध हुए। स्थल पर कहीं हमला नहीं हुआ। ज़ेटलैण्ड तट के पास ३ जर्मन विमान मार गिराये गये।

ब्रिटिश जहाज़ों पर जर्मन विमानों का हमला जारी रहा। करीब एक दर्जन जहाज़ों पर हमले हुए जिनमें दो डूब गये और एक वेकाम होगया। तीन और ब्रिटिश जहाज जिनमें 'डनवर कैसिल' नामक एक १०००२ टन का जहाज भी था, सुरंग से टकरा कर डूब गये। इसके बाद कई दिनों तक जर्मन विमानों और सुरंग के कारण जहाज लगातार डूबते रहे। २१ जनवरी को 'ग्रेनविल' नामक ब्रिटिश विध्वंसक टारपीडो द्वारा नष्ट कर दिया गया। तीसरे दिन 'एक्जमाउथ' नामक एक और विध्वंसक १७५ आदमियों के साथ डूब गया। २५ जनवरी को 'डायसलैण्ड' युद्ध पोत के घेरे के भीतर से सकुसल लौट आने से जर्मनी को बड़ी खुशी हुई। २९ जनवरी को जर्मन वायुयानों और पनडुब्बियों ने ब्रिटेन के ४०० मील लम्बे समुद्र तट के जहाज़ों पर मशीन गन, बम तथा टारपीडो से वार किया। दूसरे दिन भी इसी तरह हमला हुआ। जर्मनी ने दो दिन में १८ जहाज डुबाने का दावा किया।

किन्तु ब्रिटेन ने भी धीरे धीरे ऐसी व्यवस्था की कि जहाजी क्षति कम होने लगी। मध्य दिसम्बर से मध्य जनवरी तक ब्रिटेन के कुल ४४ ही जहाज जिनका वजन १५०००० टन

था, नष्ट हुए। युद्ध के प्रथम दो महीने में यह २२०००० टन था। इस तरह ३० प्रतिशत हानि कम हो गई। ब्रिटेन के जहाजी काफिलों के संरक्षण में तटस्थ राष्ट्रों का व्यापार होने लगा। किन्तु अपनी परिस्थिति के कारण नारवे, स्वीडेन और डेनमार्क को बहुत क्षति पहुंची।

अपनी जहाज़रानी की रक्षा के लिए प्रयत्न करने के साथही ब्रिटेन ने जर्मनी पर पूर्ण समुद्री घेरा डालने की भी कोशिश की। उत्तरी सागर में जर्मन बन्दरगाहों की ओर जाने वाले सब रास्तों में सुरंगे बिछा दी गयी थी और उनकी खूब निगरानी होती थी। किन्तु कुछ जर्मन जहाज और कई तटस्थ देशों के जहाज नारवे के समुद्र से होकर जर्मन बन्दरगाहों में जा सकते थे। ब्रिटेन ने इसे बन्द करने का निश्चय कर लिया।

२२ मार्च को पहले पहल युद्ध-सामग्री के कारखाने के लिए नारवे के लोहा ले जाने वाले एक जर्मन जहाज को डुबाने के लिये ब्रिटिश पनडुब्बी का प्रयोग नारवे के समुद्र में हुआ। इसके बाद और कुछ रोज में इसी भांति कई जर्मन जहाज नारवे के समुद्र में डुबाये गये। इसका परिणाम बहुत ही महत्वपूर्ण हुआ। २७ मार्च को जर्मनी ने नारवे को चेतावनी दी कि वह शत्रुराष्ट्र को अपने समुद्र में कारवाई करने से रोके। नारवे ने ब्रिटेन के पास विरोध पत्र भेजा। इसके उत्तर में श्री चर्चिल ने घोषणा की कि जर्मनी पर कड़ाई के साथ घेरा

डालने के सम्बन्ध में किसी देशकी तटस्थता का ख्याल नहीं किया जायगा। तीन दिन बाद प्रधान मंत्री श्री चेम्बरलेन ने भी इस बात का समर्थन किया और जर्मन के विरुद्ध और भी जबर्दस्त आर्थिक घेरा डालने की घोषणा की।

इस धमकी आदि का परिणाम यह हुआ कि अचानक जर्मनी ने नारवे पर हमला कर दिया। जर्मन हमले के कारणों तथा घटनाओं का वर्णन अगले अध्याय में किया जायगा और पनडुब्बियों के युद्ध का वर्णन आगे कहीं किया जायगा।

दसवां अध्याय

—नार्वेजियन युद्ध—

९ अप्रैल को तड़के सारे संसार को अचंभे में डालते हुए जर्मनों ने नार्वे पर जबर्दस्त चढ़ाई कर दी। आगे बढ़े हुए जर्मन सैनिकों के दस्तोंने ५ घंटे के अन्दर जलसेना, हवाई सेना तथा फौज के ५ मुख्य मुख्य स्टेशनों पर कब्जा कर लिया। विजित स्थानों की रक्षा के लिये जर्मन आक्रमणकारी फौज प्रबलवेग से नारवे पर टूट पड़ी।

कुछ समय पहले इंगलैण्ड के जेनरल आयरनसाइड ने जर्मन फौज के अधिनायकत्व में अविश्वास प्रकट किया था। इस बात पर उन्होंने ज़ोर दिया था कि सभी जर्मन जेनरल नये और कच्चे हैं, अनुभव हीन हैं। स्कैण्डेनेविया पर जर्मनी के विद्युतवेग के इस आक्रमण ने इस भ्रम के लिये कोई स्थान नहीं रख छोड़ा और यह सिद्ध कर दिया कि जर्मन फौज में वोन मोल्टके तथा लुडेन डार्फ से भी कहीं बढ़कर योग्य जेनरल हैं। प्रामाणिक अधिकारियों का मत है कि संसार के समुद्री, हवाई तथा स्थल के संयुक्त युद्ध के इतिहास में स्कैण्डेनेवियन युद्ध के योग्यतम संञ्चालन का कोई दूसरा उदाहरण नहीं है।

९ अप्रैल को हिटलर के जर्मन सैनिकों ने अपनी खाक़ी-

सब्ज़ी वर्दी में दो विद्युत आक्रमण—एक नार्वे तथा दूसरा डेनमार्क पर किये। जर्मनी का यह छोटा सा पड़ोसी डेनमार्क किसी भी हालत में इस आक्रमण का सामना कर सकने की स्थिति में नहीं था। ९ अप्रैल को तड़के, यंत्रों से सुसज्जित जर्मन फौजने फ्लेसबुर्ग तथा टाण्डक के समीप शेल्सविग सरहद को पार किया तथा वह समूचे डेनमार्क पर तेज़ी के साथ कब्जा करने के लिये आगे बढ़ा। यह काम कुछ ही घण्टों के अन्दर हो गया। इसके लिये विशेष तैयारी की ज़रुरत नहीं पड़ी। साथ ही जंगी तथा यातायात जहाज़ों से जर्मन सेना भी कोपेन-हेगेन, कार्सार, निवोर्ग, जेडसेर (Gjedser) तथा अन्य स्थानों पर उतारी गयी। सवेरे ८ बजते बजते डेनमार्क की राजधानी तथा वेतार के स्टेशन पर कब्जा हो गया। भारतवर्ष के कई समाचार पत्रों में डेनमार्क पर हमले और कब्जे का समाचार साथ ही साथ छपा था। शाम को ६ बजकर ४५ मिनट पर जर्मनी के सदर फौजी दफ्तर से यह संबाद दी गयी कि समूचे देश पर कब्जा हो गया है।

डेनिश सरकार ने विरोध करते हुए भी जर्मनी के हमले को स्वीकार किया। जर्मन अधिकृत रेडियो से डेनिश नरेश तथा प्रधान मंत्री ने ब्राडकास्ट में जनता को जर्मनों का विरोध करने से मना किया। अन्य देशों से डेनमार्क का तार आदि का सम्बन्ध भी पूर्णतया काट दिया गया।

अब देखना है कि नार्वेजियन युद्ध में क्या हुआ। उस दिन १७ फरवरी था। जर्मन जहाज़ 'एल्टमार्क' कुछ ब्रिटिश कैदियों के साथ नारवे के किसी फोर्ड (Fjord) में पहुंचा था। ब्रिटिश विध्वंसक 'कोसैक' (Cossack) ने 'एल्टमार्क' पर हमला कर दिया और ब्रिटिश कैदियों को छुड़ा लिया। नारवे के लिये अशुभ सूचक जर्मनी का असन्तोष उसी दिन प्रकट हुआ। नारवे के राष्ट्रीय अधिकार में हस्तक्षेप किया गया था, उसकी तटस्थता भंग की गयी थी। उसने जोरदार विरोध किया लेकिन उसका कोई फल नहीं हुआ।

२२ फरवरी को ब्रिटिश सबमेरीन ने पहली वार एक जर्मन टैंकर को नारवेजियन समुद्री क्षेत्र में डुबा दिया। नारवे की तटस्थता दूसरीवार भंग की गयी। ऐसी ही घटनाओं की पुनरावृत्ति होती रही। २ अप्रैल को स्वीडिश सरकार ने यह चेतावनी दी कि नारवेजियन समुद्री क्षेत्र में कच्चा लोहा ढोने वाले जर्मन जहाज़ को पकड़ना जर्मनी को इस बात के लिये आमंत्रित करना है कि वह मित्रराष्ट्र और स्कैण्डेनेवियन मुल्कों के बीच व्यापार सम्बन्ध को तोड़ने की कोशिश करें। ६ अप्रैल को नारवे ने फिर विरोध किया और जर्मनी तथा इङ्गलैण्ड दोनों ही को यह चेतावनी दी कि नारवे की तटस्थता बुरी तरह भंग की जा रही है।

८ अप्रैल को प्रातःकाल ब्रिटिश और फ्रेञ्च सरकारों ने

नारवे और स्वीडेन के विरोधों तथा उनकी चेतावनियों के वावजूदा, उन्हें यह सूचित किया कि मित्रराष्ट्रों के जंगी जहाजों ने नारवेजियन समुद्री क्षेत्रों में तीन जगह सुरंगें विछा दी हैं। अन्तराष्ट्रीय नियम का इस प्रकार खुल्लम खुल्ला उल्लंघन करने तथा नारवेजियन तटस्थता भंग करने और उसे छेड़ने का नारवेजियन सरकार ने गहरा और जोरदार विरोध किया।

नारवे की राजधानी ओस्लो और डेनमार्क की राजधानी कोपेनहेगेन के जर्मन दूतों ने ९ अप्रैल को ५ वजे सवेरे नारवे और डेनमार्क के सरकारों को पत्र दिये जिनमें ब्रिटेन और फ्रेञ्च द्वारा जर्मनों को भूखों मारने के लिये लगाये गये समुद्री अवरोध की चर्चा करते हुए यह लिखा गया था कि जर्मन सरकार ने आज सैनिक कारवाई शुरु कर दी है। डेनमार्क तथा नारवे के कुछ सैनिक महत्व के स्थानों पर कब्जा करना उसका उद्देश्य है। आज से नारवे और डेनमार्क की रक्षा का भार जर्मन सरकार लेती है। उत्तरी प्रदेश को ब्रिटेन और फ्रान्स की ओर से होने वाले किसी भी हमले से वचने का जर्मनी की सरकार ने दृढ़संकल्प कर लिया है। अन्त में कहा गया था—यह न समझा जाय कि जर्मनी डेनमार्क और नारवे की स्वतंत्रता का अपहरन या तो इस समय या भविष्य में करना चाहता है। नारवें ने किसी भी तरह जर्मनी के आगे

झुकने से इनकार कर दिया। उसने 'अल्टीमेटम' को ठुकरा दिया। आक्रमण करने के लिये सेनायें चल पड़ीं।

नारवेजियन आक्रमण में सब से आश्चर्य जनक बात यह थी कि हमले का एकाएक होना। किसी को भी इसका पता नहीं था। ह्वाइट हाल और पेरिस में उतना ही आश्चर्य हुआ जितना ओस्लो में। जब यह समाचार लन्दन पहुंची तो प्रधानमंत्री श्री चेम्बरलेन ने साधारण सभा में कहा—नारविक पर जर्मन कब्जे की खबर अवश्य गलत होगी। जिस स्थान पर कब्जा हुआ है वह लारविक होना चाहिये। लारविक दक्षिण में एक छोटा सा स्थान है जहां मछलियाँ पकड़ी जाती हैं। पंचम अंग की सहायता से हिटलर ने घातक वार करना प्रारम्भ किया। जर्मनी की आंख नारवे पर कब्जा करने का है इसका प्रथम आभास उस दिन मिला जब ८ अप्रैल को दो जर्मन यातायात जहाज़ नारवेजियन समुद्री तट के समीप डुबाये गये थे। जर्मनी के आक्रमण करने की योजना का पता तभी लगा था। वस्तुतः कुछ दिन पहले नारवे के ५ प्रमुख बन्दरगाहों पर जर्मनी के फौजी तथा अस्त्र-शस्त्र ढोने वाले जहाज़, जंगी जहाज़, क्रूज़र तथा विध्वंसकों के संरक्षण में भेजे जा चुके थे। इनमें से सभी जहाज़ अपने निर्दिष्ट स्थानों पर पहुंच चुके थे। वे हुक्म पाने की इन्तज़ार में थे।

९ अप्रैल को तड़के चेतावनी देने तथा सेना, गोले बारूद और युद्ध सामग्री के विभिन्न स्थानों पर उतारे जाने का काम एक ही साथ प्रारम्भ हुआ। उधर चेतावनी दी गयी और इधर नारवे की राजधानी ओस्लो, सबसे महत्वपूर्ण हवाई बन्दरगाह, स्टेवैञ्जर, दूसरा बड़ा बन्दरगाह बर्गेन, सबसे बड़ा रेलवे स्टेशन ट्राण्डहाईम तथा स्वीडेन से कच्चा लोहा जहाज-द्वारा लाने के एक ही बन्दरगाह नारविक पर सामरिक कारवाई शुरु की गयी। नारवे की ओर से पहले तो जरा भी विरोध नहीं हुआ। केवल ओस्लो में नारवे के एक क्रूजर 'ट्रीगवेसन' (Tryggvason) ने तोपों से गोलावारी करके एक जर्मन क्रूजर एम्डेन (Emden) को डुबा दिया तथा दूसरे जंगी क्रूजर नाइसेनाव (Gneisenau) को बहुत क्षति पहुँचाई। व्यापारी जहाजों के भेष में कुछ जर्मन मेरीन, जर्मन मालवाहक जहाजों के साथ इन स्थानों में पहुंच चुके थे। बन्दरगाहों के अफसरों को धमकी द्वारा वश में करने के बाद उन्होंने इन पर कब्जा कर लिया। उन स्थानों पर कब्जा करने का काम इस तरह सम्भव हो सका।

नारवे नरेश हकोन के साथ सरकार तथा पार्लमेण्ट और शाही परिवार ने ओस्लो (राजधानी) का परित्याग कर दिया और हैमर चले आये। ९ अप्रैल को सवेरे अधिकांश जनता ने ओस्लो खाली कर दिया। तीसरे पहर ओस्लो पर जर्मन का

कब्जा हो गया। रेडियो स्टेशन जर्मनों के हाथ आ गया। स्थानीय नाजीदल के नेता मेजर विद्कुन क्विसलिंग की अध्यक्षता में शीघ्रता गुड़िया सरकार स्थापित की गयी। लेकिन कुछ ही दिन बाद उन्हें विदा होना पड़ा।

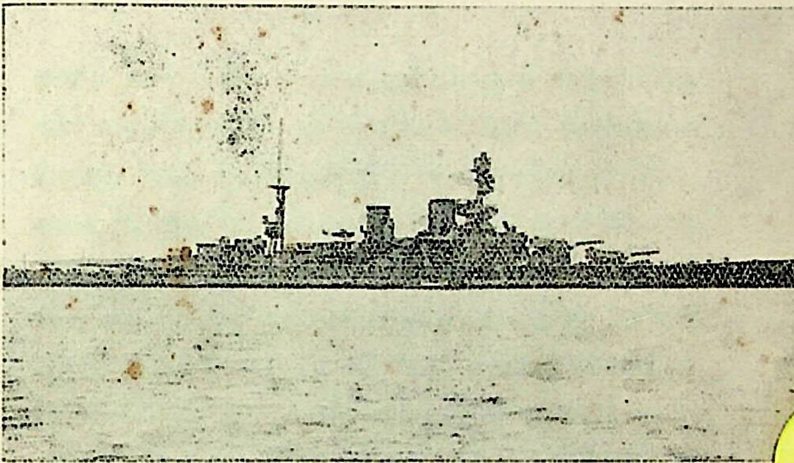
नारवे पर इस विद्युतवेग के हमले में जर्मन हवाई सेना ने प्रमुख काम किया। जर्मनी के बम वर्षकों ने पहले युद्ध क्षेत्र के मोरचों को छिन्न भिन्न कर दिया। तब छतरियों से जर्मन फौज उतर पड़ी। प्रमुख सेना की अगली पाँत के आगे के स्थानों पर उसने कब्जा कर लिया। ऐसा करने से सेना सञ्चालन के मुख्य २ केन्द्रों पर और नारवेजियन सेना की युद्ध सामग्री के केन्द्र पर शीघ्र कब्जा हो गया। स्टेवैञ्जर के नजदीक सोला (Sola) के हवाई अड्डे पर छतरिसेना ने अधिकार जमा लिया था। इसकी रक्षा के लिये एक छोटी सी सेना के साथ एक नारवेजियन कर्मचारी तैनात था। युद्ध क्षेत्र में मडसते हुए नाजी बम वर्षक ऊपर आ गये। उन्होंने उनकी मोरचेबन्दी तोड़ दी। तब एकाएक हल्की मशीन गनों ले लेकर १२० जर्मन सिपाही जर्मन विमानों से छतरी के सहारे उतर पड़े। शेष सेना तथा मोरचेबन्दी उन्होंने नष्ट करदी और स्थान पर कब्जा कर लिया।

डेनमार्क और नारवे पर आक्रमण के समाचार पाने के कुछ ही घण्टे बाद मित्रराष्ट्रों की सुप्रीम वार कौंसिल (Supreme

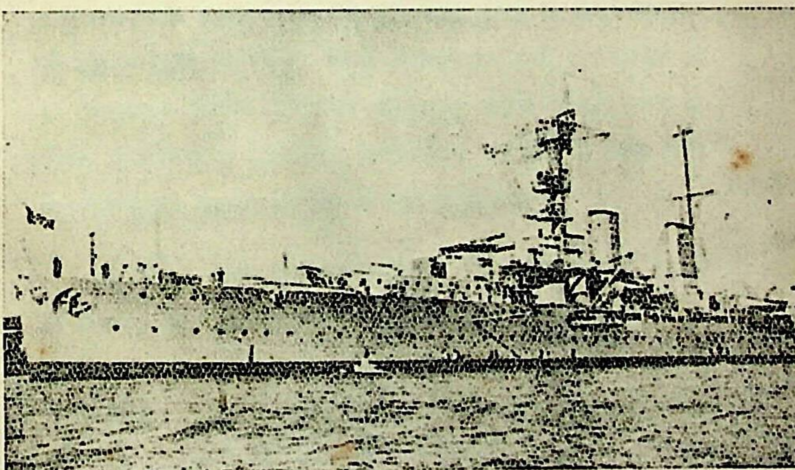
War Council) की बैठक लन्दन में हुई। दुपहर में ब्रिटिश परराष्ट्र विभाग से घोषणा ब्राडकास्ट की गयी जिसमें कहा गया कि ब्रिटिश तथा फ्रेञ्च सरकारों ने नारवेजियन सरकार को आश्वासन दिया है कि नारवे पर जर्मन हमले को सामने रखते हुए यह निश्चय किया गया है कि नारवे को पूरी सहायता दी जायगी। यह सूचित कर दिया गया है कि उनकी पूरी सहायता करते हुए युद्धमें पूर्ण भाग लिया जायगा। फ्रान्स के सहयोग से आवश्यक समुद्री तथा सामरिक कारवाई की जा रही है।

ब्रिटिश समुद्री तथा हवाई सेना ने उसी दिन बड़ी तेजी के साथ जवाबी कारवाई शुरु की। जर्मन सैनिकों के साथ बहुत सी समुद्री तथा हवाई लड़ाइयां हुईं। एक जगह समुद्री मुठभेड़ में ब्रिटिश विध्वंसक 'ग्लोवर्म' को जर्मन क्रूजरों ने डुबा दिया। एक दूसरा विध्वंसक 'गुरखा' हवाई आक्रमण से डुबाया गया। ब्रिटिश हवाई सेना ने भी जवर्दस्त बदला लिया। जर्मनी के २ हल्के क्रूजर कोलन और कार्लसरू डुबा दिये गये। जर्मन विध्वंसक भी डुबा दिया गया।

१० अप्रैल को सवेरे नारविक फोर्ड में एक भारी युद्ध हुआ। ब्रिटिश विध्वंसक जहाजी वेड़े के आगे रहने वाले जहाज 'हण्टर' नें गश्त लगाते समय कुछ जर्मन विध्वंसकों को देखा। 'हण्टर' ब्रिटिश विध्वंसकों को उसका पीछा करने तथा घेरने का



जर्मन क्रूज़र "एमडेन"



जर्मन युद्धपोत "नाइसेनाव"

तत्काल आदेश दिया। ५ ब्रिटिश विध्वंशकों ने पीछा किया और जर्मन विध्वंसकों को घेर लिया। जर्मन विध्वंसकों की सहायता समुद्री तट के छोटे छोटे तोप कर रहे थे। ब्रिटिश कप्तान के लिये यह बड़ी साहस तथा दृढ़ निश्चय की बात थी कि बहुत से जर्मन जहाजों के बीच घुसकर वे युद्ध करें और वह भी उस समय जब जर्मन जहाजों की सहायता समुद्री किनारे के तोप कर रहे थे। टारपीडो के आक्रमण से 'ट्रएडर' डूब गया। फ्लोटिला के आगे का जहाज़ 'हार्डी' भी नष्ट हो गया। कई आदमी मरे। 'हाट्सपुर' को गहरी क्षति पहुंची तथा दूसरे विध्वंसक जहाज 'होस्टाइल' को भी थोड़ी क्षति पहुंची। 'हाट्सपुर' किसी प्रकार पीछे लौट सका। एक जर्मन विध्वंसक पर टारपीडो का वार हुआ और अनुमान किया जाता है कि वह डूब गया होगा। ३ विध्वंसकों को गहरी क्षति पहुंची। उनमें आग लग गयी। जर्मनी के ६ यातायात जहाज जिन पर आक्रमण करने वाली फौज के लिये सामान लदा था डुबा दिये गये। जर्मनी के अस्त्र शस्त्र पहुंचाने वाला जहाज भी बम से उड़ा दिया गया।

१३ अप्रैल को नारविक फोर्ड में फिर युद्ध हुआ। जर्मन विध्वंसकों पर हमला करने के लिये ब्रिटिश विध्वंसकों का मजबूत दस्ता तथा अन्य जहाज रवाना हुए। जर्मन जहाजों में से चार खाड़ी में डुबा दिये गये। ३ और जहाज नारविक

शहर के पीछे एक दूसरे फोर्ड में जा छिपे। ३ ब्रिटिश विध्वंसक क्षतिग्रस्त हुए।

इस बीच नारवे वाले भी मुकाबले की तैयारी कर रहे थे। नारवे वालों की सहायता के लिये मित्र राष्ट्रों की सेना भी तैयार हो रही थी। ओस्लो से हटकर नारवेजियन सेना ने हैमर तथा लिल हैमर में मोरचा कायम किया था। ये कस्बे ओस्लो के क्रमशः उत्तर और उत्तर-पश्चिम में हैं। जर्मन सेना ओस्लो से उत्तर की ओर बढ़ रही थी। इस जर्मन सेना का उद्देश्य वर्गेन, स्टेवैञ्जर तथा ट्राण्डहाईम के जर्मन सेना से मिलना और सम्बन्ध कायम करना था।

अप्रैल के मध्य में ट्राण्डहाईम से १०० मील उत्तर एक छोटे से बन्दरगाह नैमसास तथा लिल हैमर से ८० मील उत्तर-पश्चिम आन्दलसेन पर और नारविक पर कब्जा करने के लिये मित्रराष्ट्रों ने नारवे के फौजी अधिकारियों की राय से समुद्री सेना उतारी। मित्रराष्ट्रों ने हमला करने की अपनी इस योजना को यद्यपि बहुत गुप्त रखने की कोशिश की लेकिन जर्मन गुप्तचर इतने कुशल थे कि उनकी प्रत्येक चाल का पता जर्मनों को तुरन्त लग जाता था। आन्दलसेन से ब्रिटिश, फ्रेञ्च, चेक तथा पोलिश सेना लिल हैमर की तरफ बढ़ी। यहाँ जर्मन सेना तथा विमानों ने नारवेजियन और मित्रराष्ट्रों की सेना को बहुत कुछ नष्ट कर दिया। उनके पैर उखड़ गये। नैमसास में मित्रराष्ट्रों

की और भी अधिक दुर्गति हुई। जर्मन विमानों ने उनके बन्दरगाह तथा शस्त्रागार और रसद सब कुछ नष्ट कर दिये। मित्रराष्ट्रों की सेना के नारवे में उतरने के एक हफ्ते के अन्दर ही नारवे की तथा मित्रराष्ट्रों की तमाम सेना छिन्नभिन्न तथा अव्यवस्थित हो गयी। जर्मन बड़ी दृढ़ता के साथ आगे बढ़ रहे थे। उनकी बढ़ी हुई सारी सेनाओं में सम्बन्ध स्थापित हो गया था केवल नारविक से सम्बन्ध का कायम होना बाकी रह गया था।

ब्रिटेन की श्रेष्ट समुद्री सेना ने प्रयत्न किया कि नारवे की जर्मन सेना का जर्मनी से सम्बन्ध विच्छेद कर दिया जाय। जर्मनी की हवाई सेना के सामने उनकी यह कोशिश एकदम वेकार हो गयी। चेम्बरलेन ने यह स्वीकार किया कि जर्मन फौज एक दिन में १००० के हिसाब से नारवे पहुंच रही है। उन्होंने यह भी स्वीकार किया कि हवाई-यातायात जहाजों से युद्ध सामग्री भी अधिक पहुँच रही है। यहाँ तक कि छोटे २ टैंक तक इसी प्रकार नारवे पहुंचाये जा रहे हैं।

२ मई को जब रही सही सेना भी वहुत सी युद्ध सामग्री तथा मृत सैनिकों को छोड़ कर पीछे हट आई तो केन्द्रीय तथा दक्षिणी नारवे में मित्रराष्ट्रों ने युद्ध वन्द कर दिया। नारवे-जियन सरकार तथा नारवे नरेश को जर्मन विमानों ने इस बुरी तरह भगाया कि उन्हें इङ्गलैण्ड जाकर शरण लेनी पड़ी।

९ जून की आधी रात थी जब नारवे वालों ने भी अपने हथियार डाल दिये। युद्ध बन्द हो गया। उस दिन रविवार था।

केवल नारविक को छोड़ सारा नारवे जर्मनों के कब्जे में आ गया। यहाँ मित्रराष्ट्रों की सेना अब भी मौजूद थी। १० जून को फ्रान्स की ओर दबाव बढ़ने के कारण उनको भी वहाँ से लौट जाना पड़ा। युद्ध की अन्तिम अवस्था में ब्रिटेन को २ विध्वंसक, १ विमान ढोने वाले जहाज 'ग्लोरियस', तेल-वाही 'आयलपायोनियर' तथा यातायात जहाज 'ओरमा' से हाथ धोना पड़ा।

जब हिटलर ने नारवे पर हमला किया था तब नौ सेनाध्यक्ष श्री चर्चिल तथा फ्रेञ्च प्रधानमंत्री श्री रेनो ने इसे सामरिक भूल कही थी। युद्ध के अन्त में मुसोलिनी ने मित्रराष्ट्रों की इस हारको दूसरा दरेदानियाल बतलाया। गुप्तचर तथा पंचम अंग के संरक्षण में जलस्थल तथा हवाई सेना के परस्पर सहयोग का सामरिक इतिहास में ऐसी कोई दूसरी घटना नहीं हुई। इसका यह एक बहुत ही उज्वल उदाहरण है।

नारवेजियन युद्ध में इस हार के कारण ब्रिटिश सरकार की बड़ी कड़ी आलोचना हुई। इसके फलस्वरूप १० मई को चेम्बरलेन को प्रधानमंत्री के पद से इस्तीफा देना पड़ा और उनके स्थान पर विन्सटन चर्चिल इङ्गलैण्ड के प्रधानमंत्री बनाये गये।

ग्यारवां अध्याय

—पश्चिमी मोरचा—

ज्वाला मुखी के उद्‌गार की तरह हिटलर के विद्युत-गामी विमान हालैण्ड, वेल्जियम तथा फ्रान्स पर टूट पड़े। हिटलर की अबतक की विजय उसके इस युद्ध के सामने तुच्छ मालूम होने लगती है। हालैण्ड, वेल्जियम और फ्रान्स पर आक्रमण की एकही योजना बनाई गयी थी। एकही उद्देश्य से प्रेरित होकर यह आक्रमण किया गया था। इसलिये इन तीनों हमलों का बयान हम एक साथ करेंगे।

जर्मनी के सामरिक उद्देश्य तथा उसके युद्ध प्रणालि हिटलर के मस्तिष्क के आकस्मिक उपज मात्र नहीं थे बल्कि सन् १९१४-१८ के युद्ध में प्राप्त अनुभवों के आधार पर कार्यान्वित किये गये थे। सन् १९१४-१८ की योजना भी उस पुरानी तथा ऐतिहासिक शेलीफेन योजना (Schlieffen Plan) पर बनाई गयी थी। इस योजना का मुख्य उद्देश्य वेल्जियम की निम्न-भूमि से होते हुए फ्रान्स को पश्चिम से घेरना तथा उस पर पीछे से हमला करना था। इस योजना को और ठोस तथा विस्तृत बनाया गया। जर्मनी के सैनिकों की शिक्षा तथा मोर्चा-बन्दी इसी ढंग पर हुई। सन् १९१४ में विद्युत्वेग से यह योजना कार्यान्वित की गयी थी। किन्तु फौजी अधिकारियों ने

पेरिस के उत्तर तरफ से बढ़कर भारी भूल की थी। शत्रु को हमला करने का मौका मिल गया था। मार्न की प्रसिद्ध लड़ाई में भी यही बात हुई। सन् १९४० में यह भूल नहीं की गयी। फ्रेन्च सेना को पीछे से घेरने के लिये दक्षिण में बढ़ने से पहले नयी योजना के अनुसार हालैण्ड और बेल्जियम पर हमला करके उत्तर-सागर तथा जर्मनी से स्पेन तक के समुद्री तट पर कब्जा करने का लक्ष्य स्थिर किया गया था। नारवे और डेनमार्क पर जहाँ ब्रिटिश अपने पांव रख सकते थे जर्मनी का पहले ही कब्जा हो चुका था। इसलिये नवीन शेलीफेन योजना (Schlieffen Plan) के अनुसार हालैण्ड, बेल्जियम और फ्रान्स के समुद्री तट पर पहले हमला करना जरूरी था। सन् १९४० के युद्ध की घटनाओं का रुख वैसी ही रही।

युद्ध छिड़ने के समय से ही हालैण्ड और बेल्जियम पर जर्मन हमले की गरम अफवाहें उड़ रही थीं। मित्रराष्ट्र जानते थे कि जर्मन सेना मैजिनो दुर्गपांत पर सीधे हमला करने के अवसर को अवश्य टाल देगी। इसके लिये बेल्जियम पर कब्जा होना जरूरी था। उधर जर्मनों ने सोचा कि पहले हालैण्ड पर कब्जा करना जरूरी है जिससे बन्दरगाहों पर अधिकार हो जाय ताकि ब्रिटिश सेना को पीछे से वार करने का मौका न मिले। और उधर इङ्गलैण्ड पर हमला करने के लिये जर्मनी को इन बन्दरगाहों में अपना हवाई तथा गोलाबारी

करने का अड्डा भी मिल जाय। जर्मनी को हमला करने के लिये अब वहाने की आवश्यकता पड़ी। उसके प्रचार विभाग ने सहायता की। यह वतलाया गया कि जर्मनी के रूर प्रदेश पर मित्रराष्ट्र हमला करना चाहते हैं तथा इस प्रदेश की रक्षा की आवश्यकता है।

यह आशंका की स्थिति अधिक समय तक वनी रही और कई वार यह खबर फैल गई कि हालैण्ड और वेल्जियम पर हमला हो गया। लेकिन वास्तविक आक्रमण १० मई को ३ बजे प्रातःकाल हुआ। जर्मनी की स्थल तथा वायुयान सेना ने बिना किसी पूर्व चेतावनी के हालैण्ड, वेल्जियम और लक्जेमवुर्ग पर एक साथ ही हमला किया। हालैण्ड, वेल्जियम तथा फ्रान्स के शहरों पर एक साथ ही वमवर्षा भी शुरू हो गयी।

यह सूचित किया गया था कि पश्चिमी मोरचे पर सेना-नायकत्व का काम स्वयं हर हिटलर करेंगे। जर्मन सेना को सम्वोधित करते हुए हिटलर ने कहा था—"३०० वर्षों से अधिक हुए, इङ्गलैण्ड और फ्रान्स के शाशकों की यही नीति रही कि यूरोप में किसी भी राष्ट्र का संघटन न होने पावे और न जर्मनी शक्तिशाली होने पावे। पश्चिमो मोरचे के वीर सिपाहियो! आप लोगों का समय आ गया। आज जो यह लड़ाई छिड़ने जा रही है वह १ हजार वर्षों के लिये जर्मनी के भविष्य का निश्चय करेगी।"

दुनिया की अस्थिर अवस्था देखकर यूरोप के सारे छोटे छोटे राष्ट्रों ने मोरचे बन्दी कर ली थी। फ्रान्स की मोरचे बन्दी प्रसिद्ध मैज़िनों दुर्गपांत की जो स्विटजरलैण्ड में बैसिल (Basle) के ठीक सामने से न्युवर्ग (Neuburg) तक उत्तर में राईन नदी के वांये तट पर फैली हुई थीं। तब ये पाँत ४०° पूर्व कोन काट कर लोंग्वी (Longwy) तक भी गयी थी। इस तरह लकजेमबुर्ग सहित सम्पूर्ण जर्मन-फ्रैंकों सरहद को यह पाँत घेरे हुए थी। पूर्व में डंकर्क तक भी यह पाँत फैली थी। इस तरह वेल्जियम से होकर होने वाले जर्मन हमले से भी बचाव की व्यवस्था थी।

वेल्जियम की मोरचे बन्दी लांग्वो के उत्तर से लीज (Liege) तक और हालैण्ड में मास्ट्रिश्चट (Maastricht) के दक्षिण एल्वर्ट नहर (Albert Canal) से लगाकर एण्टवर्प (Antwerp) तक थी। हालैण्ड की मोरचेबन्दी मास और येसेल नदियों के वांये किनारे जुइदर ज़ी (Zuider Zee) से मास नदी तक जहाँ बाढ़ अधिक आया करती है, फैली थी।

जर्मन के हमले तीन तरफ से हुए। पहला हमला येसेल नदी की दक्षिण स्थिति मोरचेबन्दी तोड़कर मध्य वेल्जियम पर; दूसरा हालैण्ड के एक टुकरा अरक्षित जमिन होते हुए, मासके दक्षिण की मोरचेवन्दी तोड़कर मध्य वेल्जियम पर तथा तीसरा लोंग्वी से डंकर्क तक फैली हुई फ्रेञ्च मोरचेवन्दी के विरुद्ध लकज़ेमबुर्ग पर। इस हमले में एक खास बात यह थी कि हालैण्ड के कई

हिस्सों में जर्मनी के हज़ारों छत्तरी सैनिक हवाई अड्डों, पुल तथा बन्दरगाहों पर कब्जा करने के लिये उतर पड़े। अधिकांश छतरी सैनिक हालैण्ड तथा ब्रिटिश सैनिकों, किसानों तथा मजदूरों के भेश में थे। नारवे की तरह यहाँ भी जर्मनी के बहुत से एजेण्ट मौजूद थे। इन एजेण्टों की सहायता से जर्मन छतरी सैनिकों ने पहले ही दिन एम्सटर्डम, हेग और राटर्डम पर कब्जा कर लिया था।

इस बीच हालैण्ड और बेल्जियम की सेना ने गहरा मुकाबला करना शुरू किया। इङ्गलैण्ड और फ्रान्स से शीघ्र सहायता की पुकार की गयी। ब्रिटिश और फ्रेञ्च सरकारें सहायता करने का आश्वासन दिये।

अधिकांश लकज़ेमवुर्ग को जर्मन सैनिकों ने तुरन्त रौंद डाला। यहाँ की महारानी (ग्रैण्ड डचेज) तथा सरकार देश छोड़कर फ्रान्स में भाग आयीं। लारी और मोटर पर सवार जर्मन फौजें प्रवल वेग से आगे बढ़ गई और शीघ्रही म्यूज नदी के तट पर स्थित्त सेदान (Sedan) तक पहुँच गयी, जहाँ से फ्रान्स की असली मोरचेबन्दी शुरु होती है।

विभिन्न साधनों से युक्त पेट्रोल तथा बारूद से लदे और हथियारबन्द सैनिकों से सुसज्जित जर्मन सेनाओं ने अभूत पूर्व तीव्रता से आगे बढ़ना शुरु किया। उनके भयानक मार के आगे हालैण्ड और बेल्जियम की पहली मोरचेबन्दी न ठहर

सकी। जर्मन सेना ने हालैण्ड की मोरचेबन्दी को तोड़ येसेल नदी पर स्थित आर्नहैम (Arnheim) से होकर हालैण्ड में प्रवेश किया। मध्य बेल्जियम के फाटक मास्ट्रिश्ट (Maastricht) को भी जर्मनों ने अपने अधीन कर लिया। मास्ट्रिश्ट के पश्चिम म्यूज पर सामरिक महत्व के लिये अत्यन्त उपयोगी पुलपर उन्होंने कब्जा कर लिया। इसका प्रभाव निर्णयकारी हुआ। इससे जर्मन सैनिक न केवल हालैण्ड में प्रवेश करने में समर्थ हो सके बल्कि वे मध्य बेल्जियम में मोरचेबन्दी की पिछली पाँत पर भी पहुंच गये।

हमले के २४ घण्टे बाद लीज नगर की मोरचेबन्दी के मुख्य स्थान पर जर्मनों ने कब्जा कर लिया और उधर हालैण्ड की सेना मास्ट्रिश्ट किले के टूटने के बाद पूर्व योजनानुसार मास और येसेल नदियों के पीछे हट गयीं।

१२ मई तक सम्पूर्ण पश्चिमी मोरचे पर हालैण्ड से लेकर उत्तरी फ्रान्स तक युद्धका रूप उग्र हो गया। जर्मनी की हवाई कारवाई बड़े पैमाने पर जारी रही। बेल्जियम की मुख्य मोरचेबन्दी—एल्बर्ट नहर पर ब्रिटिश और फ्रेञ्च सेना भी डट गयी थी। यह पहले कहा जा चुका है कि फ्रेञ्च इञ्जिनियरों ने मेजिनो दुर्गपाँत के ढंग पर ही इस मोरचेबन्दी को बनाय था।

१३ मई को उन कई फ्रेञ्च शहरों पर जर्मन विमानों ने गोले बरसाये जो शत्रु के युद्ध के अड्डे समझे जाते थे। म्यूज नदी

के पूर्व में समूचे बेल्जियम में लीज से लेकर सेदान (Sedan) तक गहरा टैंक युद्ध प्रारम्भ हुआ। खबर मिला कि जर्मनों के २ हजार भीषण टैंक युद्ध में नियुक्त हैं। इतने टैंक ब्रिटेन और फ्रान्स के पास कुल मिलाकर भी नहीं थे। जर्मनों की भयानक मार के बावजूद भी बेल्जियम में लीज का क़िला अभी तक टिका रहा। लेकिन जर्मनों ने किले को चारों ओर से घेर लिया और बेल्जियम सैन्य को क़िले के भीतर ही छोड़ कर वहाँ से वे उत्तरी फ्रान्स की ओर बढ़े। दक्षिण में जर्मन सेना फ्रान्स में म्यूज नदी के किनारे लीज से सेदान तक पहुंच गयी। यहाँ भी भयानक लड़ाई हुई।

उसी दिन हालैण्ड की महारानी विल्हेल्मिना, राजकुमार बर्नहार्ड तथा राजकुमारी जुलियाना के साथ इंगलैण्ड पहुंची। इसके दूसरे ही दिन डच मंत्रिमण्डल भी लन्दन चली आयी।

राटर्डम तथा अन्य स्थानों पर उतरी हुई छतरी सेना से मिलने के लिये यंत्रों से सुसज्जित जर्मन फौज मध्य हालैण्ड से होकर गुजरी। विमानों द्वारा भीषण गोलावारी किये जाने पर डच सैनिकों के पांव उखड़ गये। जर्मन फौज छतरी सेना से जा मिली। १४ मई को ७ बजे शाम को हालैण्ड की सेना ने आत्म समर्पण कर दिया।

इस बीच, बेल्जियम में जर्मन सैनिक देश के मध्य भाग तक आगे बढ़ते गये। लोवेन पाँत (Louvain) पर ब्रिटिश

फौज और जर्मनों में गहरी लड़ाई हुई। करीब करीब सम्पूर्ण मोरचे पर ब्रिटिश फौज पर हमले हुए। दो ही दिनों के भीतर जर्मन टैंकों की भयानक मार के आगे विरोधी टिक न सके और जर्मन सेना म्यूज नदी को कई स्थानों पर पार कर गई और लोवेन और ब्रुसेल्स पर अधिकार कर लिया। उत्तर और दक्षिण, सेदान के समीप जर्मनों ने डट कर हमला किया। वेल्जियम के सरहद के उत्तर पश्चिम मैजिनो दुर्गपाँत को बढ़ाने के लिये बनी मोरचेबन्दी को उन्होंने छिन्न भिन्न कर दिया। इस युद्ध में विद्युत-गति सम्पन्न, भीषण शब्दकारी जर्मन बमवर्षकों ने महत्तपूर्ण काम किया। १८ मई तक जर्मन सेना फ्रेञ्च सेना पाँत को स्फीत करके रेथेल (Rethel) तक पहुंच गयी। जर्मनों के लिये सबसे महत्त्वपूर्ण बात केवल यही नहीं थी कि फ्रेञ्च सेना म्यूज नदी के पीछे तक हटा दिये गये बल्कि यह भी थी कि म्यूज़ नदी के पुल बगैर टूटे इनका कब्जा हो गया था। फ्रेञ्च सैनिकों द्वारा पुल को नष्ट नहीं किये जाने के विषय में बाद में बड़ा विवाद उठा। अब भी यह स्पष्ट नहीं हो सका कि कैसे यह पुल बिना नष्ट हुए जर्मन के हाथ में आ गया। पुल का फाटक एक बार खुला और सारी की सारी जर्मन फौज फाटक से होकर आगे बढ़ी।

लेकिन आशा के विरुद्ध जर्मन बढ़ाव दक्षिण में पेरिस की तरफ नहीं हुई। फ्रेञ्च सेना नायक ने सोचा कि उन्होंने जर्मन

बढ़ाव को रोक दिया है लेकिन वस्तुतः जर्मन चेनेल के बन्दरगाहों की तरफ पश्चिम की ओर बढ़ रहे थे।

१९ मई को मार्शल फोश के प्रियपात्र जेनरल वेगां जेनरल गैमलिन के स्थान पर सारी मित्र सेना के सेना-नायक बनाये गये। पश्चिम की ओर जर्मनों का बढ़ाव विद्युत वेग से जारी रहा। टैंकों के भीषण युद्ध के पश्चात् जर्मनों ने ली चैटो (Le Chateau) तथा सेंट क्वेनटिन (St. Quentin) पर जहाँ फ्रेञ्च जर्मनों का गहरा मुकाबला कर रहे थे कब्जा कर लिया।

जर्मन इस प्रकार तेजी से आगे बढ़ते गये। २१ मई को वे एबविले (Abbeville) अमीन्स (Amiens) तथा अरास (Arras) तक पहुँच गये। इससे बेल्जियम के मोरचे शेल्ट (Scheldt) पर स्थित मित्र सेना, और मुख्य फ्रेञ्च सेना तथा रसद पहुंचाने के स्थानों से सम्बन्ध विच्छेद हो गया। अनुमान लगाया गया है कि ५ लाख सेना इस प्रकार बेल्जियम में घिर गयी।

२२ मई को मित्र सेना ने उत्तरी फ्रान्स तथा बेल्जियम में घिरी अपनी सेना को मुक्त करने के लिये जर्मनों पर शक्तिशाली हमला करना प्रारम्भ किया। उन्हें इस प्रयत्न में केवल आंशिक सफलता मिली। फ्रेञ्च सेना ने भीषण युद्ध के पश्चात अरास (Arras) पर फिर कब्जा कर लिया। लेकिन एक दूसरे पांत

पर जर्मनों ने फ्रेञ्च फौज की ९ वीं टुकड़ी के सेना-नायक जेनरल जिरैएड (General Girand) को मय सहकर्मियों के पकड़ लिया।

युद्ध की स्थिति अब बहुत गम्भीर हो चली थी। लाओं (Laon) और बेल्जियम-फ्रेञ्च सरहद के बीच घमासान युद्ध छिड़ा था। यंत्रों से सुसज्जित जर्मन सेना ने अपनी चढ़ाई जारी रखी। उनके साथ भारी भारी क्रूजर टैंक भी थे। क्रूजर टैंक, टैंक की रक्षा के लिये बने होते हैं। इन युद्धों में अधिकतर तोपें नहीं व्ययहार की गयी। जिससे फ्रेञ्च खाई को छोड़कर खुला युद्ध करने को विवश हो जावें उसके समस्त साधनों का उपयोग जर्मन कर रहे थे। ज्वालामुखी के उद्गार की तरह जर्मनों के हमले जारी थे। पहले दिन प्रबल वेग से चढ़ाई होती दूसरे दिन मोरचों का केन्द्री करण तथा संघटन। दक्षिण में सोम नदी के मोरचे पर तथा पश्चिम में शेल्ट पर फ्रेञ्च सैनिक आ डटे।

१९ मई को फ्रान्स से भेजे गये असोशियेटेड प्रेस (संयुक्त-राष्ट्र अमेरिका) के एक तार में जर्मनों के लगातार हमले के क्रम का वर्णन इस प्रकार किया गया है—फ्रेन्च सेना जल्दी में खुद बनाई गयी खाइयों में आश्रय ले सकती हैं जो केवल एक गज गहरी है। पत्थरें के पीछे अथवा झाड़ियों में भी फ्रेञ्च सेना छिपी हुई है। जर्मनों के तेज बढ़ाव के कारण

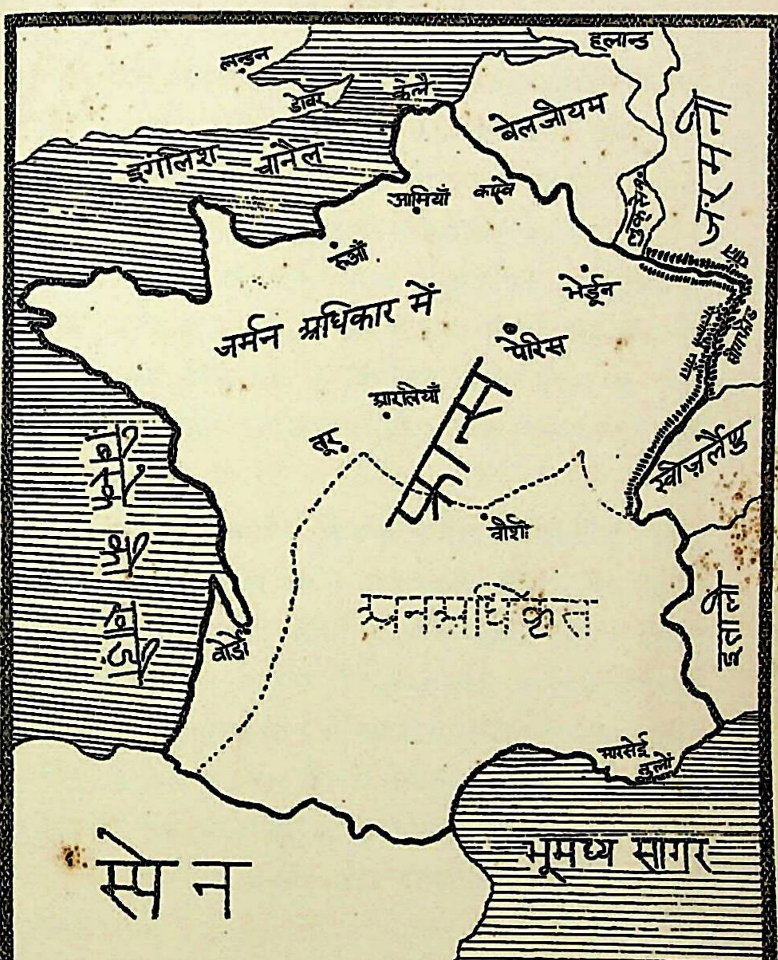
खुल्लम खुल्ला युद्ध करने के लिये लाचार होने पर फ्रेञ्च सैनिकों को ऐसे प्रदेश में प्रारम्भिक मुकावला करना पड़ा जहां मोरचेबन्दी अभी अभी शुरु हुई थी। दुकड़ो में विभाजित फ्रेञ्च सेना पर पहले जर्मन बमवर्षकों ने बम से, फिर हवाई मेशिन-गनों से हमला किया। विमानों के हमले के बाद ही विख्यात "पैनज़ेन" टैंको की पांत एक साथ मिलकर हमला करती थी। इन विख्यात "पैनज़ेन" फौजी टुकड़ियों में ३०० से ४०० के बीच बड़े टैंक होते हैं। रही सही फ्रेञ्च सेना को भी ये साफ करदेती है। सौ सौ गज ऊंची आग की लपटे उठती हैं। स्वयं जमीन में दाग करने वाले तेज हथियारों से विपत्त के सेना को काटती जाती है। जैसे जैसे टैंक के पहिये चक्कर काटते हुए आगे बढ़ते हैं वैसे वैसे मोटर, लारी और मोटर साइकिल से लायी गयी अगुए फौज की कतारें दहल जाती हैं। इस प्रकार कब्जा किये गये स्थानों पर नाजी पैदल सेना तुरंत पहुँच जाती और उसकी उचित व्यवस्था करती है और टैंको और यंत्रों से सज्जित सेना और विमान आगे बढ़कर हमला करते हैं।

२४ मई को जर्मनों ने शेल्ट (Scheldt) पर मित्र सेना को फिर पीछे हटाया और नदी को कई स्थानों पर पार किया। वे लिस (Lys) नदी तक बढ़ आये ओर टूर्नेन (Tournain) में प्रवेश किये। ब्रिटिश फौज ने बोलोन बन्दरगाह खाली कर

दिया। बोलोन को इस समय तक जर्मनों ने घेर लिया था और फ्रेञ्च सेना बोलोन के किले में घिरी हुई थी। दो दिन बाद किला टूट गया और जर्मन सेना सेदान (Sedan) से समुद्र तक फैल गयी। इस प्रकार बेल्जियम में ब्रिटिश फौज पूर्णतया घिर गयी।

जर्मनों के चंगुल में कस जाने पर ब्रिटिश सेना के सामने अपने को बचाने तथा फिर ब्रिटेन पहुंचने के सिवा और कोई रास्ता नहीं रहा। मित्र सेना के हाथ में केवल ओस्टैण्ड और डंकर्क बन्दरगाह रह गए। २७ मई को बेल्जियम में घिरी ब्रिटिश सेना तथा फ्रेंच और बेल्जियम सेनाओं पर भीषण हमला हुआ। उधर जर्मन हवाई सेना ने डंकर्क तथा चैनेल के जहाजों पर गहरी गोला बारी शुरू की।

२८ मई को स्थल में आधुनिक युग के सर्व श्रेष्ठ शक्ति के विरुद्ध १८ दिन के भीषण युद्ध के पश्चात बेल्जियम नरेश लीयोपोल्ड ने आत्म समर्पण किया तथा उनके हुक्म से बेल्जियम की सेना ने हथियार डाल दिये। उन्होंने ब्रिटिश और फ्रेञ्च अधिकारियों के पास ७२ घण्टे पूर्व युद्ध जारी रखने में अपनी असमर्थता की सूचना भेज दी थी। वक्तव्य में उन्होंने यह बतलाया था कि अपनी सेना को बर्बादी से बचाने के लिये मैं ने ऐसा किया है।


लन्डन
डोवर
कैलै
हलान्ड
बेलजीयम
जर्मनी
इंगलिश चानेल
आमियाँ
रूआँ
जर्मन अधिकार में
पैरिस
आरलेयाँ
तूर
फ्रान्स
वीशी
अनअधिकृत
बोर्डो
स्वीज़लैण्ड
इटाली
मारसेई
तुलों
स्पेन
भूमध्य सागर

बिजित फ्रान्स

सम्राट लीयोपोल्ड के इस आत्म समर्पण ने बेल्जियम-स्थित ब्रिटिश और फ्रेन्च फौज को कहीं का न रखा। ये सेनायें करीब करीब पूरी तरह घिर गयी थीं। वे बड़ी असहाय अवस्था में पड़ी हुई थीं। अरक्षित सेनाके उत्तरी बाजू की ओर बढ़ती हुई जर्मन सेना ने ओस्टेण्ड पर कब्जा कर लिया और वह विमानों से भीषण गोला बारी करती हुई डंकर्क की तरफ बढ़ी। इंगलैण्ड लौट जाने के लिये केवल एक यही बन्दरगाह ब्रिटिश सेना के हाथ में बच रहा था।

ब्रिटेन के सामारिक युद्ध के इतिहास में डंकर्क में ब्रिटिश सेना ने जो वीरता से जर्मनों का मुकाबला किया था वह सर्वदा स्वर्णाक्षरों में चमकता रहेगा। किले पर करीब ३ हजार ब्रिटिश सैनिकों का कब्जा था जिनको आत्मसमर्पण के लिये दो घण्टे का समय दिया गया था। लेकिन उन्हें दो दिन तक उसके लिये रुकना पड़ा। ३ हजार ब्रिटिश सैनिकों में से केवल ४० सैनिक बचे। लेकिन अपनी वीरता तथा त्याग से उन्होंने ३ लाख ब्रिटिश सेना को जर्मन्नों द्वारा हत्या किये जाने से बचा लिया।

३१ मई को डंकर्क बन्दरगाह से ब्रिटिश और फ्रेन्च फौजों ने रातोदिन जहाज पर चढ़ना आरम्भ किया। युद्ध में शत्रु की मार के समक्ष वीरता पूर्वक पीछे हटते

जाना और साथ ही जहाज पर चढ़ते जाना बहुत ही कठिन कार्य था। फिर तोपखानों के मुह के सामने तथा बमवर्षक विमानों के नीचे से यह काम और भी मुश्किल हो जाता है। ब्रिटिश सेना ने सामरिक, समुद्री तथा हवाई सैनिकों की सहायता से यह काम बड़ी धीरता तथा वीरता के साथ किया। जर्मन हवाई जहाजों ने इस सेना को बर्बाद करने का भरसक प्रयत्न किया। यद्यपि क्षति बहुत काफी हुई फिर भी जितनी ताकत लगा दी गयी थी उसके मुकाबले क्षति कुछ अधिक नहीं हुई। बेल्जियम के घेरे से मित्र सेना का वापिस आने का काम रात दिन जारी रहा। इससे ब्रिटिश जहाजी ताकत का प्रभुत्व प्रमाणित हो गया। इस कार्य में फ्रेञ्च समुद्री बेड़े भी सम्मिलित थे।

हालैण्ड और बेल्जियम की लड़ाई में विजयी होने के पश्चात जर्मनों ने अपना ध्यान फ्रान्स पर केन्द्रित किया।

५ जून को प्रातः काल जर्मनों ने टैंकों, तोपखानों, पैदल सेना तथा विमानों से लैस होकर फ्रेञ्च राजधानी की तरफ बढ़ने के लिये पश्चिम में दूसरा जबर्दस्त हमला किया। १० लाख जर्मन सेना इसमें लगायी गयी थी। उस में ८० डिवीज़न सेना और २००० टैंक थी। फ्रान्स के युद्ध को 'घोर नरक' (Immense Hell) कहा जाता है। फ्रेञ्च सेना

अब एक दूसरी क्षेत्र पर मोरचाबन्दी कर ली थी जिसे, उनके सेनापति के नाम से, प्रसिद्ध "वेगाँ पाँत" कहते हैं। ये पाँत समुद्र तट स्थित आबभिल (Abbeville) से लेकर, सोम और आइलेट नदियों के बाँये तट पर से होते हुए पूर्व में माजिनों पाँत तक फैले हुए थे। ६ और ७ जून को युद्ध का रूप बड़ा भयंकर रहा। ८ जून को जर्मनों ने दूसरा भीषण आक्रमण किया जिसमें सशस्त्र मोटरारूढ़ डिवीजन तथा २० ताजे पदातिक डिवीजन सम्मिलित थे। सोम-एलेथ (Somme-Ailethe) मोरचे पर बहुत भारी लड़ाई हुई। साथही इंगलैण्ड पर भी विस्तृत क्षेत्रों में हवाई धावे हुए जिसके फल स्वरूप इंगलैण्ड से बच्चों को हटाया जाना प्रारम्भ हुआ। ९ जून को जर्मनों ने अपने आक्रमण को और भी उग्र बना दिया और बड़ी भयानक लड़ाई हुई जिनमें और भी नये जर्मन सैनिक और टैंक लगाये गये।

छठें दिन के युद्ध के बाद एक फ्रेञ्च सैनिक अधिकारी को यह सूचित करना पड़ा कि स्थिति बड़ी गम्भीर है। उत्तरी युद्ध क्षेत्र में जर्मनी की मुख्य सेना ने फ्रेञ्च सेना पर प्रबल प्रहार करना शुरू किया। सेना तथा युद्ध सामग्री में मित्र सेना जर्मनों की अपेक्षा बहुत कम थी। ब्रुसेल तथा रेथेल के युद्ध क्षेत्र से वे शीघ्र पीछे हट गये। युद्ध क्षेत्र का शीघ्रता के साथ

विस्तार होने से मुकाबला करना भी कठिन हो रहा था। जर्मन सेना की अगली पाँत ब्रिटिश दस्ते को मुख्य सेना से अलग करती हुई सीन तक पहुँची। जर्मनों का प्रहार इतने वेग से हो रहा था कि नई सेना तथा नयी युद्ध सामग्री के पहुँचते रहने पर भी मित्र सेना जर्मन बढ़ाव को रोक न सकी। रोयेन से वर्नोन तक जाने के लिये उन्होंने पुल बना लिया। वे दक्षिण में एव्रो (Evreux) तक पहुंच गये। इस बीच जर्मन फौज का बीच का भाग भी मार्न नदी के किनारे "मो" (Meaux) तक पहुँच गया। अब वे पेरिस को अर्द्धगोलाकार के रूप में घेरे हुए थे। पेरिस का युद्ध ३ दिन तक इतने भीषण रूप में चलता रहा कि जितना पहले कभी नहीं सुना गया था। जर्मन सैनिकों की संख्या १५ लाख तक पहुंच गयी थी। इसमें १३० डिवीजन थे।

१० जून को इटली ने भी इङ्गलैण्ड और फ्रान्स के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी। पीछे से इस प्रकार वार होने से फ्रान्स की दुर्दशा और भी बढ़ गयी।

जर्मनी से बराबर नई फ़ौज तथा नई युद्ध सामग्री पहुँचते रहने के बावजूद तीन ओर से घिरे पेरिस की हालत बड़ी नाज़ुक हो गयी। १३ जून को यह घोषित किया गया कि पेरिस अरक्षित तथा खुला हुआ है। ऐसा करने का उद्देश्य पेरिस की कला तथा उसके प्रासाद और भवन को नष्ट होने से बचाना था।

सरकार तथा फ्रान्स का बैंक पेरिस से हटकर "टूर" के पास चला आया।

इस बीच पूर्व में दूसरा विकट युद्ध छिड़ा हुआ था। जर्मनों ने रीम्स पर कब्जा कर चुकने के बाद लोअर मार्न (Lower Marne) में सेंट डिज़ियर (St. Dizeir) की ओर बढ़ाव की। उनका उद्देश्य फ्रान्स के उत्तरी-पूर्व युद्ध क्षेत्र में विजय पाना था और इस तरह से माजिनों पाँत को पीछे से दबा लेना था।

१४ जून को प्रातःकाल विजयी जर्मन सेना ने पेरिस में प्रवेश किया। १९१४ का उनका स्वप्न आज सत्य हुआ। टैंको और यंत्रारूढ़ सेनाओं ने बैण्ड बाजे के साथ नगर में प्रवेश किया और 'चैम्पस एलिजी' के पास चल कर 'अज्ञात सैनिक' के प्रति सम्मान प्रदर्शन किया।

१४ जून को फ्रेञ्च मैजिनो पांत के लिये दक्षिण तथा उत्तर से खतरा उत्पन्न हो गया। उत्तर से बढ़ती हुई जर्मन सेना ने लोअरमार्न के चेलॉन्स (Chalans) पर कब्जा कर लिया। अब खतरनाक जर्मन सेना वर्डून के लिये दक्षिण की तरफ बढ़ी। दक्षिण से बढ़ती हुई इटालियन फौज का उद्देश्य जर्मन फौज से मिलना था ताकि मैजिनो पांत इटली और जर्मनी की सेनाओं के घेरे में पड़ जाती।

१५ जून को फ्रान्स के मध्य भाग में जर्मनी का विकट बढ़ाव प्रारम्भ हुआ। जर्मन फौज लोअरमार्न में शोमों (Chau-

mont) तक पहुंची । युद्ध छिड़ने के समय से लेकर अबतक जर्मनों ने मैज़िनो पांत पर सीधा हमला नहीं किया था । मैजिनो पांत की क्रुद्ध तथा गरजती तोपों की गोलावारी के बीच जर्मनों ने अलसास (Alsace) में राउन नदी को पार किया । दूसरे दिन, स्विटजरलैण्ड की सीमा पर ग्रे (Gray) प्रान्त में विद्युत वेग से बढ़ती हुई तथा राउन नदी को पार करने वाली जर्मन सेनाओं से घिरी जाने के कारण फ्रेञ्च सेना ने मेज़िनो पांत का परित्याग किया । इटालियन सेना पीडमान्ट से और उत्तर तरफ बढ़ी ।

१५ जून को फ्रान्स में टूर्स (Tours) नामक स्थान पर मित्रराष्ट्रों के सुप्रीम युद्ध कौंसिल की बैठक हुई जिसमें फ्रेञ्च जनता की ओर से श्री रेनो ने अमेरिका से सहायता की अपील की । प्रेसिडेण्ट रुजवेल्ट के इनकार करने पर रेनो ने इस्तीफा दे दिया और मार्शल पेताँ ने एक दूसरा मंत्रिमण्डल बनाया । १७ जून को प्रातःकाल फ्रान्स ने जर्मनी से युद्ध बन्द करने का और सन्धि के बारे में प्रस्ताव किया । लेकिन ब्रिटेन ने युद्ध जारी ही रखने का निश्चय किया । चर्चिल ने भाषण में गरजते हुए यह घोषित किया कि जबतक हिटलर दुनियां से उठ नहीं जाता तबतक युद्ध जारी रहेगा ।

म्युनिख में १८ जून को हिटलर और मुसोलिनी के बीच परामर्श हुआ जिसमें सन्धि की बातें तय हुई । २१ जून को

हिटलर ने फ्रेञ्च प्रतिनिधियों को, कैम्पेन के उसी एतिहासिक जंगल में रेलके उसी डब्बे में, जिसमें १९१९ में मार्शल फोश ने जर्मन प्रतिनिधियों को सन्धि की शर्तें दी थी, सन्धि की शर्तें दी। शर्तें देने के पहले हिटलर ने कहा—"वीरता पूर्ण मुकाबले के बाद फ्रेञ्च सेना परास्त हुई है तथा उसने आत्मसमर्पण किया है। फ्रेञ्च राष्ट्र को जर्मनी निर्लज्जतापूर्ण शर्तें नहीं देना चाहता। लेकिन एक शर्त तो यह जरूर रहनी चाहिये कि ब्रिटेन के विरुद्ध युद्ध जो जर्मनी पर जबर्दस्ती लायी गयी है जारी रखने के लिये जर्मनी को सभी सुविधायें दी जायँ।" मार्शल फोश का उदण्डतापूर्ण तथा कटु वर्ताव तो पाठकों को स्मरण होगा जिस की चर्चा हम पहिले कर चुके हैं। उसके मुकाबले में हिटलर का व्यवहार कहीं अच्छा समझना चाहिये।

२२ जून को साढ़े चार बजे संध्या काल में सन्धिपत्र पर जर्मनी और फ्रान्स के हस्ताक्षर हो गये। फ्रेञ्च प्रतिनिधिमण्डल तब इटली रवाना हुऐ। २४ जून को सात बज कर ३५ मिनट पर इटली और फ्रान्स के बीच सन्धि हुई। सन्धि की शर्तों के अनुसार जेनेवा से टूर्स के उत्तर तथा दक्षिण पश्चिम में टूर्स से लेकर स्पेनिश सरहद तथा समूचे फ्रान्स पर जर्मनी का कब्जा हो गया। इस तरह फ्रान्स का समस्त उत्तरी और पश्चिमी समुद्री तट जर्मनी के कब्जे में आ गया जहाँ ब्रिटेन के विरुद्ध युद्ध करने के लिये वह अपने अड्डे बना सकता है।

दक्षिण की समुद्री तट पर अब भी फ्रेञ्च का ही आधिपत्य है। इटली और फ्रान्स का सरहद इस प्रकार निर्द्धारित हुआ :—दोनों देशों के बीच १५० मील का रकवा रखा गया जिस में सामरिक कारवाई नहीं की जायगी। दक्षिण में फ्रेञ्च समुद्री तथा हवाई सेना का अड्डा टूलोन से भी अपनी सैनिक सामग्री फ्रान्स को हटा लेनी पड़ी। शर्त यह भी था कि फ्रान्स अपने सारे बड़े विमान बाहर से वापस बुला लेगा।

अधिकृत प्रदेशों में जर्मनों ने स्थानीय सरकारों को फ्रेञ्च जनता के अधीन ही रखछोड़ा ताकि जहाँ जैसी जरुरत हो वहां जर्मन सैनिक अधिकारियों की मदद लेकर शासन करें। फ्रान्स के उपनिवेशों के सम्बन्ध में भी शर्तें तय हुईं।

यूरोपियन महाद्वीप में इस प्रकार स्थल युद्ध का अन्त हुआ जिसमें हिटलर का स्थान बहुत ऊंचा और दृढ़ हो गया। स्थल में फ्रान्स सब राष्ट्रों से बढ़ चढ़कर ताकतवर समझा जाता था। लेकिन केवल एक महीना और १० दिन के अन्दर ही वह कुचल दिया गया। १८ दिन के अन्दर बेल्जियम फ्रान्स और ब्रिटेन की सम्मिलित सेना नष्ट होते होते बची। हालैण्ड केवल ५ दिन के युद्ध में हार गया।

मित्र राष्ट्रों पर आफत आई। उनमें कई का नाश भी हुआ। पर ब्रिटेन की स्थिति पूर्ववत रही। मार्शल पेताँ के मंत्रि-मण्डल को स्वीकार करने से उसने इनकार कर दिया। ब्रिटिश

राजदूत रोनाल्ड कैम्पवेल फ्रान्स से ब्रिटेन चले आए। अपने जोशीले भाषण में चर्चिल ने ऐलान किया कि ब्रिटेन युद्ध तभी वन्द करेगा जब दुनिया से हिटलर की शक्ति उठ जायगी।

अब युद्ध का अगला अध्याय प्रारम्भ हुआ जिसमें इंगलिश चैनेल की एक ओर ग्रेट ब्रिटेन और दूसरी ओर नाजी जमनी के बीच भयंकर लड़ाई शुरू हुई।

बारवांह अध्याय

—जर्मन युद्ध शैली—

सन् १९१४-१८ के युद्ध में जर्मनी की हार जर्मन सेना के लिये प्रच्छन्न रूप से वरदान सिद्ध हुआ। हारकर चुपचाप बैठ जाने के बदले जर्मनी के फौजी विभाग ने हार के कारणों पर अपना ध्यान केन्द्रित किया तथा उन्हें दूर करने के लिये उपाय सोचने लगा। गत महायुद्ध में जर्मन सेना ने एक महाभूल की थी। उसने यह नहीं सोचा था कि चैनेल के बन्दरगाहों से उनपर पीछे से हमला हो सकता है। हमला होने पर जर्मन फ़ौज शीघ्रतया पीछे भागने लगी। रूस के समाप्त हो जाने पर उन्होंने मित्र सेना पर वार करना प्रारम्भ किया लेकिन मित्र सेना की मोरचेबन्दी नहीं टूट सकी और जर्मनों को मन चाहा फल नहीं मिला। उस हार का कारण था मित्र सेना की नई मोरचेबन्दी—खाइयां।

सन् १९१८ के विजय के पश्चात् फ्रान्स ने अपना ध्यान खाइयों की तरफ लगाया। कैप्टेन लिडेल हार्ट (Captain Liddel Hart) ने एक नया सामरिक विचार का प्रचार किया जिसका निर्णय यह था कि आक्रमणकारी सेना के विरुद्ध अपनी जबर्दस्त खाइयों में मोर्चाबन्द सेना विजय पा सकती

है। इस सिद्धान्त को स्वीकार करते हुए फ्रेन्च मिलिटरी एकडेमी ने खाइयों से लड़ने के ढंग का विस्तृत अध्ययन किया जिसका परिणाम अन्त में मैजिनो पांत के रूप में सामने प्रकट हुआ।

जर्मन फौजी दफ्तर ने अपना ध्यान युद्ध के इस नये ढंग पर केन्द्रित किया। गत महायुद्ध के वाद जो उसे कुचल दिया गया था तथा असमर्थ वना दिया गया था उसका शिकार होना उसे पसन्द नहीं आया। वह खाईयों की इस मोर्चेबन्दी की कुंजी ढूढ़ने लगा जिसके परिणाम स्वरूप युद्ध करने की नयी टैंक-शैली तथा स्थल सेना के साथ साथ बमवर्षक विमानों द्वारा वम और गोले वरसाये जाने का नया तरकीब का आविष्कार हुआ। छतरी सेना इत्यादि अन्य नयी सम्भावनाओं की ओर भी जर्मन फौजी विभाग का ध्यान गया।

शेलीफेन योजना (Schlieffen Plan) को परिष्कृत तथा परिवर्द्धित रूप देने के अतिरिक्त जर्मनी यांत्रिक युद्ध की सम्भावना पर भी विचार करने लगा। इसका भी अनुसन्धान प्रारम्भ हुआ। इसमें काफी सफलता मिली और इसका पूरा पूरा उपयोग हुआ। उदाहरण के लिये यह कहा जा सकता है कि नारवे के युद्ध काण्ड पहिले से ही विचार कर लिया गया था और एक विपेश प्रकार की हल्की तोपों का उपयोग किया गया था जो कि एक साथ टैंक-वेधी, विमान-वेधी तथा मैदान में काम

आने लायक नये प्रकार के तोप थे। इन हल्के त्रिविध उपयोगी तोपों से जर्मनों को युद्ध में बहुत सहायता मिली। टैंक का आविष्कार पहले ब्रिटेन और फ्रान्स ने किया था। लेकिन इसका पूरा पूरा लाभ जर्मनी ने उठाया। खाइयों की मोरचेबन्दी को ध्यान में रखते हुए इसको और परिवर्द्धित किया गया।

पश्चिमी युद्ध क्षेत्र के तूफानी हमले में बमवर्षक विमान, टैंक और छतरी सेना का संयुक्त प्रयोग हुआ था। मित्र सेना की मोरचेबन्दी को उन्होंने तोड़ दिया। मित्रराष्ट्रों के उन यातायात सम्बन्धी तथा सैनिक अड्डों पर हमला कर के उन्होंने मित्र सेना के संघटन को छिन्न भिन्न कर दिया जहाँ से उनका हमला करने का इरादा था।

लम्बी मारवाली तोपें, जिन्हें बमवर्षक वायुयानों का सहयोग प्राप्त था, इस बार शत्रु सेना की ओर जितनी दूरी तक गोलाबारी कर सकती थी उतनी दूर गत युद्ध में नहीं कर सकती थी। विमान वेधी तोपें अधिक भारी होने के कारण शीघ्र हटते बढ़ते रहने की स्थिति में लाभदायक नहीं सिद्ध हुए। अब तो यह प्राय मान लिया गया है कि युद्ध-क्षेत्र में बमवर्षा करने वाले विमानों से रक्षा के लिये ज़मीन पर स्थित किसी भी प्रयत्न के पूर्णतया सफल होने की सम्भावना नहीं है।

म्यूज से सोम की ओर बढ़ते समय बमवर्षकों के सहयोग

से जर्मन टैंको ने अत्यन्त महत्व पूर्ण कार्य किया। उनके इस कार्य को देखकर टैंक के आविष्कार कर्ताओं को भी आश्चर्य हुआ होगा जिन्होंने शायद इसका अनुमान भी न किया था।

लोंगवी (Longwy) से उत्तरी सागर तक बहुत दूर तक फैली हुई एक टेढ़ी मेढ़ी गम्भीर खाई बनी हुई है जो टैंको के मार्ग में सबसे बड़ी बाधा है। इसके पीछे की ओर लकड़ी के बहुत मजबूत टैंक निरोधक खम्भें बने हुए हैं जो शत्रु के बढ़ाव को पहले ही रोक दें। खाई के हर मोड़ पर टैंक-वेधी तोपें लगी हुई हैं।

किन्तु यह खाई भी टैंको को आगे बढ़ने से रोक न सकी। सब रौंदने वाली टैंको की पहला जस्ता को, जो टैंक सेना के आगे आगे थी, अवश्य बहुत क्षति उठानी पड़ी। किन्तु ये पहली पाँत के क्षतिग्रस्त टैंक ही बहुत काम के सिद्ध हुए। इनके आगे होने के कारण पीछे के जर्मन टैंकों पर टैंक-वेधी तोपों के गोलें का कुछ भी असर न पड़ा। इन टैंकों के साथ साथ अस्थाई पुल (Plank bridge) भी रहते थे। इनके सहारे टैंको ने खाई को पार कर लिया। कुछ टैंकों के साथ पैदल सेनाकी शास्त्रास्त्रों से सुसज्जित गश्ती टुकड़ियाँ भी थीं जिनके पेंसिल के आकार की बनी डाइनमाइट चार्ज (बम की तरह बना विस्फोटक यंत्र) भी थे जो टैंक विरोधक खम्भों को उड़ाकर

जमीन को बराबर कर देते थे। बहुत बड़े बड़े भयकंर टैंको के सामने मामूली अवरोधक कुछ चीज ही नहीं थे। ये उन खम्भों आदि से होकर आसानी से गुजर जाते थे। साथ ही वे रास्ते की खाइयों को बहुत क्षति पहुँचा देते थे।

इन सब प्रयत्नों में जर्मनी को कम हानि नहीं उठानी पड़ी होगी। पहली बार उसे अपने सैकड़ों टैंक गवाने पड़े होंगे। किन्तु पहले हानि उठाकर बाद को सफल ही हुए। एक बार उन अवरोधक खाइयों को पार करने के बाद जर्मन टैंको ने अपना विनाश कारी कार्य और तेजी से शुरू किया। इन टैंको में युद्धास्त्रों के पुरजे रखे रहते थे और ये सड़कों के किनारे बने पेट्रोल के पम्पों और गोदामों से पेट्रोल छीनते थे। टैंक-दस्तों ने एक एक दिन में शत्रु के ५० मील क्षेत्रों पर कब्जा किया और शत्रु को अपार क्षति पहुँचाया।

जर्मनों के बढ़ाव की तीसरी आश्चर्य जनक बात उनकी छतरी सेना का उतारना है। यह कहना कि छतरी से उतरना केवल एक तमाशे की बात है, गलत सिद्ध हुआ है। यद्यपि फ्रान्स में सैकड़ों छतरी से उतरे जर्मन पकड़े गये पर उन्होंने बहुत कुछ काम भी किया था। वे टैंको के साथवाले बमवर्षक वायुयानों को इशारे करते थे, और वहां की जनता में कायरता तथा आतन्क के भाव फैलाते थे। इस सम्बन्ध में सबसे अच्छी उदारहण राटर्डम का है जहाँ बहुत से बड़े बड़े

वायुयानों से बहुत बड़ी सेना उतर पड़ी और शत्रु से घिर कर भी हवाई अड्डे पर कब्जा करके कई दिनों तक उसकी रक्षा करती रही।

जर्मन की इस युद्ध-शैली में अपव्यय बहुत होता है और अपने शत्रु को शीघ्र पराजित करने के लिये जान बूझ कर अपने बहुत से टैंक, वायुयान और शिक्षित सैनिकों का नाश करना पड़ता है। यह शैली तभी सफल हो सकती है जब अपने पास साधनों की कमी न हो और कमी पड़ने पर भी लगातार प्राप्त होती रहे।

फ्रान्स में अन्तिम और पूर्ण विजय के लिये जर्मनी ने अपनी सब कुछ खतरे में डाल दिया था। इसमें उसे सफलता मिली। लम्बे और लगातार युद्ध में इस तरह सफलता की कम आशा रहती है। इस ढंग के युद्ध में शत्रु यदि बहुत दिन तक अड़ गया, जैसा कि गत महायुद्ध में हुआ था, तो लेने के देने पड़ जाते हैं। फ्रान्स का पतन हो चुका है, किन्तु ब्रिटेन अपने अपार साधनों, फौजों और उत्पादक विशेसज्ञों के साथ पूर्ववत दृढ़ है। इस प्रकार अब बराबरी का युद्ध चल रहा है जिसमें बहुत दिन लगेंगे और जिसके लिए जर्मनी बहुत डरता है और अधिक दिन तक लड़ने के साधन भी उसके पास तैयार नहीं हैं।